Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

०८१
४८ कं१.२

८१
८ कं१.२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R
0८९
के४८के १:२

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

73590

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R
०८१
के ६८के.१:२

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या......... आगत संख्या 73590

पुस्तक—वितरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित २० वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा १० पैसे के हिसाब से विलम्ब—दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

73590
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केशव-ग्रंथावली

[खंड १]

73590

सम्पादक

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

हिंदुस्तानी एकेडेमी
उत्तर प्रदेश इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

73590

R
0८1
के ४८ के.1:

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय प्रमाण

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

R
091 73590

वर्ग संख्या......... आगत संख्या......

पुस्तक वितरण की तिथि नीचे अंकित है इस तिथि सहित 15 वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिये। अन्यथा 10 पैसे के हिसाब से विलम्ब दण्ड देय होगा।

१९७७

हिंदुस्तानी एकेडेमी

इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केशव-ग्रंथावली

खंड १

[रसिकप्रिया और कविप्रिया]

संपादक

श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र

हिंदी-विभाग, काशी विश्वविद्यालय

१६७७

हिंदुस्तानी एकेडेमी

इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R
080
के48के.1:2

पुस्तकालय
पुस्तक सं० .....
आगत सं० ....
तिथि ....
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

प्रथम संस्करण : १९५४
द्वितीय संस्करण : १९७७, ११०० प्रतियाँ
प्रकाशक : हिन्दुस्तानी एकेडेमी
इलाहाबाद
मुद्रक : सरयू प्रसाद पाण्डेय
नागरी प्रेस, दारागंज, इलाहाबाद

मूल्य : [redacted] रुपये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशकीय

हिन्दुस्तानी एकेडेमी की एक योजना रही है कि हिंदी के प्रमुख कवियों की समस्त रचनाओं के ऐसे संस्करण प्रकाशित किए जाएँ जिनके पाठ यथासंभव प्रामाणिक तथा सुसंपादित हों। इस योजना के अंतर्गत एकेडेमी से 'जायसी-ग्रंथावली' तथा 'तुलसी-ग्रंथावली' (खंड १) का प्रकाशन हो चुका है अब केशव-ग्रंथावली' (खंड १) इस क्रम की नई कड़ी के रूप में पाठकों के समक्ष है।

'केशव-ग्रंथावली' का संपादन अधिकारी विद्वान् श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने अनेक नई और पुरानी छपी तथा हस्तलिखित पोथियों के आधार पर किया है, जिसमें 'रसिकप्रिया', 'कविप्रिया', 'रामचंद्रचंद्रिका', 'छंदमाला', 'शिखनख', 'रतनबावनी', 'वीरसिंहदेवचरित', 'जहाँगीरजसचंद्रिका' तथा 'विज्ञानगीता' ये नौ रचनाएँ सम्मिलित हैं। पूरी ग्रंथावली के तीन खंडों में प्रकाशन का आयोजन है। इस खंड में केशव की दो रचनाएँ 'रसिकप्रिया' और 'कविप्रिया' प्रस्तुत हैं।

आचार्य और कवि केशवदास हिंदी की विभूति हैं। दुःख है कि अभी तक इनके ग्रंथों का सुसंपादित संस्करण प्रकाश में नहीं आ सका था। आशा है प्रस्तुत ग्रंथावली के संपूर्ण होने पर हिंदी के एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति होगी।

हिंदुस्तानी एकेडेमी,
उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद
सितंबर, १९५४

धीरेंद्र वर्मा
मंत्री तथा कोषाध्यक्ष

दूसरे संस्करण का प्रकाशकीय

हिन्दी के अधिकारी विद्वान आचार्य श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र के इस ग्रन्थ 'केशव ग्रन्थावली' का दूसरा संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें प्रसन्नता हो रही है। हिन्दुस्तानी एकेडेमी ने इस ग्रन्थ का पहला संस्करण सन् १९५४ में प्रकाशित किया था।

यह ग्रन्थ कई विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में निर्धारित है। विश्वास है, यह संस्करण भी विद्वज्जनों, विद्यार्थियों और सुधी पाठकों के बीच समादृत होगा।

उमाशंकर शुक्ल
सचिव तथा कोषाध्यक्ष

जुलाई, १९७७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रंथ-सूची

१. रसिकप्रिया १—९३

२. कविप्रिया ९४—२२८

संकेत

रसिकप्रिया

बाल०—बालकृष्णदासजी (ग्रंथस्वामी) का हस्तलेख, सं० १७२२।

बाल० खं०—बालकृष्णदासजी का खंडित हस्तलेख, पुष्पिका खंडित।

रस०—रसगाहकचंद्रिका का हस्तलेख, टीकाकार सूरति मिश्र, १७९० के आसपास निर्मित।

नवल०—नवलकिशोर प्रेस की मुद्रित प्रति, टीकाकार सरदार कवि, सं० १९०३ में निर्मित।

कविप्रिया

बाल०—बालकृष्णदासजी का हस्तलेख, सं० १७२४।

याज्ञिक०—याज्ञिक-संग्रह (काशी नागरीप्रचारिणी सभा) का हस्तलेख, सं० १७५८।

याज्ञिक अ०—याज्ञिक-संग्रह का अपूर्ण हस्तलेख, लिपिकाल अज्ञात।

सहज०—सहजरामचंद्रिका का हस्तलेख, टीकाकार राम कवि, सं० १८३४ में निर्मित।

हरि०—हरिचरणदास की कविप्रियाभरण टीका (मुद्रित), सं० १८३५ में निर्मित।

लाला०—लाला भगवानदीनजी का हस्तलेख, लिपिकाल अनुल्लिखित।

सरदार०—सरदार कवि की टीका (मुद्रित), सं० १९११ में निर्मित।

दीन०—दीनजी की प्रियाप्रकाश टीका, सं० १९८२ में मुद्रित।

रत्ना०—रत्नाकरजी द्वारा सं० १७२४ के हस्तलेख से संपादित 'नखशिख' (मुद्रित)।

अन्यत्र—अन्य संग्रहादि के हस्तलेख।

वही—पूर्वगामी संकेत।

ष—ख।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रसिकप्रिया

१

अथ मंगलाचरण

श्री गणेश-वंदना–(छप्पय)

एक-रदन, गजबदन, सदनबुधि, मदन-कदन-सुत।
गौरि-नंद आनंद-कंद, जग-बंद, चंद-ग्रुत।
सुख-दायक, दायक-सुकीर्ति, जगनायक-नायक।
खल-घायक, घायक-दरिद्र सब लायक-लायक।
गुरु-गुन अनंत, भगवंत-भव, भक्तिवंत भव-भय-हरन।
जय केसवदास निवास-निधि, लंबोदर, असरन-सरन॥ १॥

श्रीकृष्ण वंदना–(छप्पय)

श्रीवृषभानु-कुमारि-हेत सृंगार-रूप भय।
वास हास-रस हरे, मातु-बंधन करुनामय।
केसी-प्रति अति रौद्र, बीर मारो बत्सासुर।
भय दावानल-पान, पियो बीभत्स बकी-उर।
अति अदभुत बंचि बिरंचि-मति, सांत संतते सोच चित।
कहि केसव सेवहु रसिक जन, नवरसमय ब्रजराज नित॥ २॥

अथ कवि-वर्णन–(दोहा)

नदी बेतवै-तीर जहँ, तीरथ तुंगारन्य।
नगर ओड़छो बहु बसै, धरनीतल में धन्य॥ ३॥
आस्रम चारि बसे जहाँ, चारि बर्न सुभ कर्म।
जप, तप, विद्या वेद-बिधि, सबै बढ़े धन धर्म॥ ४॥

---

[१] गौरि-गवरि (रस०)। युत-जुत (रस०)। दायक-दाइक (रस०)। सुकीर्ति-सुकृति (रस०)। जग-गण (रस०)। गुरु-गुन-गुन-गन (रस०)।

[२] रौद्र-रुद्र (रस०)। मारो-मार्‍यौ (रस०)। पियो-कियो (रस०)। संततै-सुसंतत (रस०)। [३] जहँ-तहँ (रस०)। [४] बसे-बसें (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन प्रति जहँ दूनो लहैं, जहाँ दया अरु दान।
एक तहाँ 'केसव' सुकवि, जानत सकल जहान॥ ५ ॥
अपने अपने धर्म तहँ सबै सदा सुखकारि।
जासों देस बिदेस के रहे सबै नृप हारि॥ ६ ॥
रच्यो बिरंचि बिचारि तहँ, नृपमनि मधुकर साहि।
गहरवार कासीस-रवि, कुल-मंडन जसु जाहि॥ ७ ॥
ताको पुत्र प्रसिद्ध महिमंडन दूलहराम।
इंद्रजीत ताको अनुज, सकल धर्म को धाम॥ ८ ॥
दीन्ही ताहि नृसिंह जू तन मन रन जय सिद्धि।
हित करि लच्छन-राम ज्यों भई राज की बृद्धि॥ ९ ॥
तिन कवि केसवदास सों कीन्हो धर्म-सनेहु।
सब सुख दै करि यों कह्यो, 'रसिकप्रिया' करि देहु॥ १० ॥
संवत सोरह सै बरष बीते अठतालीस।
कातिग सुदि तिथि सप्तमी बार बरनि रजनीस॥ ११ ॥
अति रति-गति मति एक करि, बिबिध बिबेक बिलास।
रसिकन कों रसिकप्रिया कीनी केसवदास॥ १२ ॥
ज्यों बिनु डीठि न सोभिजै लोचन लोल बिसाल।
त्यों हो 'केसव' सकल कबि, बिनु बानी न रसाल॥ १३ ॥
तातें रुचि सों साचि पचि कीजै सरस कबित्त।
'केसव' स्याम सुजान को, सुनत होइ बस चित्त॥ १४ ॥

अथ नवरस-वर्णन—(दोहा)

प्रथम सिंगार सुहास्य-रस करुना-रुद्र सुबीर।
भय बीभत्स बखानियँ अद्भुत सात सुधीर॥ १५ ॥
नवहू रस के भाव बहु, तिनके भिन्न बिचार।
सबको 'केसवदास', हरि नायक है सृंगार॥ १६ ॥

अथ शृंगाररस-लक्षण—(दोहा)

रति मति की अति चातुरी, रतिपति मंत्र बिचार।
ताही सों सब कहत हैं कवि कोबिद सृंगार॥ १७ ॥

---

[९] की—सों (रस०)। कीन्हो०—कियौ धर्म सों नेहु (रस०)।
[१३] सोभिजै-सोभियै (रस०)। न०—निरसाल (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ शृंगार के भेद—(दोहा)

सुभ संजोग बियोग पुनि द्वै सिंगार की जाति।
पुनि प्रच्छन्न प्रकास करि, दोऊ द्वै द्वै भाँति ॥१८॥

अथ प्रच्छन्न-संयोग-शृंगार-लक्षण—(दोहा)

सो प्रच्छन्न संयोग अरु, कहैं वियोग प्रमान।
जानैं पीउ पिया कि सखि होइ जु तिनहिं समान ॥१९॥

अथ प्रच्छन्न-संयोग-शृंगार—(सवैया)

बन में बृषभानु-कुमारि मुरारि रमैं रुचि सों रस-रूप पियें।
कल कूजत पूजत काम-कला बिपरीत रची रति केलि कियें।
मनि सोभित स्याम जराइ जरी अति चौकी चलै चल चारु हियें।
मखतूल के झूल झुलावत 'केसव' भानु मनों सनि अंक लियें ॥२०॥

अथ प्रकाश-संयोग औ प्रकाश-वियोग-लक्षण—(दोहा)

सो प्रकास-संयोग अरु, कहैं प्रकास-बियोग।
अपने अपने चित्त में जानैं सिगरे लोग ॥२१॥

अथ प्रकाश-संयोग, यथा—(सवैया)

'केसव' एक समै हरि-राधिका आसन एक लसैं रँग-भीनें।
आनंद सों तिय-आनन की दुति देखत दर्पन में दृग दीनें।
भाल के लाल में बाल बिलोकितहीं भरि लालन लोचन लीनें।
सासन पीय सबासन सीय हुतासन में मनों आसन कीनें ॥२२॥

अथ श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न-वियोग-शृंगार, यथा—(सवैया)

कीट ज्यों काटत काननि कान्ह सों मानहूँ में कहि आवति ऊनो।
ताहि चलें सुनि कै चुप ह्वै रहे नीकहि 'केसव' एक न दूनो।
नेक अटें पट फूटति आंखि सु देखति हैं कब को ब्रज सूनो।
काहे कों काहू को कीजे परेखोऽब जो जे री जीव की नाक दै चूनो ॥२३॥

अथ राधिका को प्रकाश-वियोग-शृंगार, यथा—(सवैया)

जिनके मुख की दुति देखत ही निसि-बासर 'केसव' दीठि अटी।
पुनि प्रेम-बढ़ावन की बतियाँ तजि आन कछू रसना न रटी।

---

[२२] रंग-रस (रस०)। में दृग-त्यौं दृग (बाल०), सौं दृग (रस०)। सवासन-सवासिन (नवल०)। [२३] राधिका-प्रिया (रस०)। रहे-गए (नवल०)। एकन-एकहि (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनके पद पानि उरोज-सरोज हिये धरि कै पल नैन घटी।
तिनके सँग छूटत ही फटु रे हिय तोहिं कहा न दरार फटी ॥२४॥

(कबित्त)

सीतल समीर टारि चंद्र-चंद्रिका निवारि
'केसोदास' ऐसें ही तो हरषु हिरातु है।
फूलन फैलाइ डारि झारि डारि घनसारु
चंदन कों ढारि चित्तु चौगुनो पिरातु है।
नीर-हीन मीन मुरझाइ जीवै नीर ही तें
छीर छिरके तें कहा धीरजु धिरातु है।
पाई है तैं पीर किधौं यों ही उपचारु करै,
आगि को तौ डाढ्यो आँगु आगि ही सिरातु है ॥२५॥

श्रीकृष्ण को प्रच्छन्न-वियोग, शृंगार-यथा— (सवैया)

'केसव' रूठि रह्यो तुमहीं सों किधौं भय काहू के भीत भयो है।
बेच्यो है काहू के हाथनि नाथ किधौं तुम काहू के साथ दयो है।
मेरी सौं मोसहुँ मानहु वेगि इहाँ मनु नाहिं कहाँ पठयो है।
साँची कहौ हरि हारयो है काहू सों काहू हर्यो कि हिराइ गयो है ॥२६॥

श्रीकृष्ण को प्रकाश-वियोग-शृंगार यथा— (सवैया)

बात कहैं न सुनैं कछु काहू त्यों हेरें नहीं कोउ कैसेहूँ हेरो।
खाईं कछू न पियैं कछु केसो छुवैं न कछू कर कौंरो करेरो।
हूलि उठी ब्रज बैठी कहा उठि आवहु देखि कह्यो करि मेरो।
जानै को माइ कहा भयो कान्ह को जोग-संयोग बियोग कि तेरो ॥२७॥

(दोहा)

यों परछन्न प्रकास बिधि बरने जोग वियोग।
अब नायक-लच्छन कहौं गूढ़-अगूढ़ प्रयोग ॥

इति श्री मन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां प्रच्छन्नप्रकाशसंयोगवियोग-वर्णन नाम प्रथमः प्रभावः ॥१॥

---

[२४] यह 'बाल०' में नहीं है। [२५] डारि-डोर (नवल०)। ढारि-टारु (बाल०)। मुरझाइ-मुरझाति (बाल०)। तैं-पै (बाल०)।

[२८] 'बाल० खं०' में यह दोहा और है—

सुभग सवैया षट करे पुनि दोहा उनईस। केसव प्रथम प्रभाव में रसिकप्रिया के ईस ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२

अथ साधारण-नायक-लक्षण—(दोहा)

अभिमानी त्यागी तरुन, कोक-कलानि प्रवीन।
भव्य छमी सुंदर धनी सुचि-रुचि सदा कुलीन ॥ १ ॥
ये गुन 'केसव' जासु में सोई नायक जानि।
अनुकूल दच्छ सठ धृष्ट पुनि चौबिधि ताहि बखानि ॥ २ ॥
प्रीति करै निज नारि सों, पर-नारी-प्रतिकूल।
'केसव' मन-बच-कर्म करि, सो कहियै अनुकूल ॥ ३ ॥

अथ प्रच्छन्न-अनुकूल, यथा—(सवैया)

और के हास बिलास न भावत साधुनि को यह सिद्ध सुभावै।
बात बहै जु सदा निबहै हरि कोऊ कहूँ कछु सोधु न पावै ॥
आसन बास सुबासन भूषन 'केसव' क्यौं हूँ यही बनि आवै।
मो बिनु पान न खात जु कान्ह सु बैरु किधौं यह प्रीति कहावै ॥ ४ ॥

अथ प्रकाश अनुकूल, यथा—(सवैया)

'केसव' सूधे बिलोचन सूधी बिलोकनि कों अवलोकें सदाई।
सूधियै बात सुनें समुझें कहि आवति सूधियै बात सुहाई ॥
सूधी सी हाँसी सुधानिधि सो मुख सोधि लई बसुधा की सुधाई।
सूधे सुभाइ सबै सजनी बस कैसें किये अति टेढ़े कन्हाई ॥ ५ ॥

अन्यच्च—(सवैया)

मेरें तौ नाहिन चंचल लोचन नाहिन 'केसव' बानी सुधाई।
जानौं न भूषन-भेद के भावनि भूलिहू मैं नहिं भौंह चढ़ाई ॥
भोरेहूँ ना चितयो हरि-ओर त्यों घैरु करैं इहिं भाँति लुगाई।
रंचक तौ चतुराई न चित्तहिं कान्ह भए बस काहे तें माई ॥ ६ ॥

अथ दक्षिण-लक्षण—(दोहा)

पहिलौ सो हिय हेतु डर, सहज बड़ाई कानि।
चित्त चलें हूँ ना चलै, दच्छिन-लच्छन जानि ॥ ७ ॥

अथ प्रच्छन्न-दक्षिण, यथा—(कवित्त)

हरि से हितू सों भ्रम भूलिहू न कीजै मान,
हातो कियें हिय हूँ तें होति हित हानियें।

[१] कोक-केलि (बाल० खं०, रस०)। [२] अनुकुल-अतुल (नवल०)। चौबिधि०-चारि प्रकार (बाल० खं०)। [५] सूधियै-सूधी सी (बाल०)। सुधानिधि-सुधाकर (नवल०)। [६] भेद०-भाव के भेदनि (बाल० खं०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक में अलोक आनि नीकेहूँ कों लागतु है,
सीता जू को दूत गीत कैसें उर आनियें।
आँखिन जो देखियत सोई साँची 'केसौदास',
काननि की सुनी साँची कबहूँ न मानिय।
गोकुल की कुलटा यें यों हीं उलटावति हैं,
आजु लौं तौ वैसेई हैं कालि की न जानियें ॥८॥

अथ प्रकाश-दक्षिण, यथा–(सवैया)

चित चोंप चितैबे की तैंसियै है अरु तैंसियै भांति डरात घनै।
अरु तैसेई कोमल बोल गुपाल के मोहत हैं तिहि भाँति मनै।
गुन तैसेई, हास-बिलास सबै हुते तैसेई 'केसव' कौन गनै।
सखि तू कहे आन बधू के अधीन हैं सो परतीक किधों सपनै ॥९॥
बहि अंतर गूढ़-अगूढ़ निरंतर काम-कला कुल कौन गनै।
कहि 'केसव' हास-बिलास सबै प्रतिद्यौस बढ़ें रसरीति सनै ॥
जिनको जिय मेरई जीव जियें सखि काय मनो बच प्रीति घनै।
तिनकों कहे आन बधू के अधीन हैं सो परतीक किधौं सपनै ॥१०॥

अथ शठ-लक्षण–(दोहा)

मुँह मीठी बातैं कहै, निपट कपट जिय जानि।
जाहि न डरु अपराध को, सठ करि ताहि बखानि ॥११॥

अथ प्रच्छन्न-शठ, यथा–(सवैया)

रुचि पंकज चंदन बंदन कंचन रंचन रोचन हूँ की बची।
कहियै किहिं कारन को इते लायक का पर भामिनि भौंह नची ॥
अनुमानत हौं अँखियाँ लखि लाल ये नाहिं नै राति के रोष रची।
तन तेरे बियोग तप्यो तरुनी तिहि मानहुँ मो हिय माँह तची ॥१२॥

अथ प्रकाश-शठ, यथा–(कवित्त)

काननि के रगे रंग नैननि के डोलौ संग,
नासा अंग रसना के रसहीं समाने हौ।
और गूढ़ कहा कहौं मूढ़ हौ जू ? जानि जाहु,
प्रौढ़रूढ़ 'केसोदास' नीकें करि जाने हौ।
तन आन मन आन, कपट-निधान कान्ह,
साँची कहौ मेरी आन काहे कौं डराने हौ।

[८] नीके०-नीक हू लगावत हैं (नवल०)। की न-कहा (नवल०)।
[१०] प्रीति-प्रेम (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तौ हैं बिकानी हाथ मेरें हौं तिहारें हाथ,
तुम ब्रजनाथ हाथ कौन के बिकाने हौ ? ॥१३॥

अथ धृष्ट-लक्षण—(दोहा)

लाज न गारिहु मार की छाँड़ि दई सब त्रास।
देख्यौ दोष न मानही धृष्ट सु कहियै तास ॥१४॥

अथ प्रच्छन्न-धृष्ट, यथा—(सवैया)

नेह भरे लै लै भाजत भाजन कौन गनै दधि दूध मठाए।
गारि दियें तें हँसैं बरजें घर आवत हैं जनु बोलि पठाए।
लाज की और कहा कहौं 'केसव' जे सुनियें ते सबै गुन ठाए।
मामी पियै इनको मेरि माइ को हैं हरि आठहुँ गाँठ अठाए ॥१५॥

अथ प्रकाश-धृष्ट, लक्षण—(दोहा)

मनसा बाचा कर्मना बिहसनि चितवनि लेखि।
चलनि चातुरी आतुरी आठौं गांठि बिसेषि ॥१६॥

अथ प्रकाश-धृष्ट, यथा—(सवैया)

सौंह को सोचु सकोचु न पांच को डोलत साहु भए करि चोरी।
बैननि बंचकताई रची रति नैनन के संग डोलति डोरी।
लाज करै न डरे हित-हानि तें आनि अरे जिय जानि कै भोरी।
नाहिनै 'केसव' साख जिन्हैं बकि कै तिन सों दुखवै मुख कोरी ॥१७॥

(दोहा)

बरने कबि-नायक सबै, नायक इहि अनुसार।
सब-गुन-लायक नायिका सुनि अब बहुत प्रकार ॥१८॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां चतुर्विधनायकप्रच्छन्नप्रकाशवर्णनं नाम द्वितीयः प्रभावः ॥२॥

---

[१४] कहियै०—केशवदास (बाल०, नवल०)। मीमी-मीमी (रस०)।
[१६] कै तिन-ऐसि न (बाल० खं०)। [१७] बाल० में नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३

अथ नायिका-जाति-वर्णन—(दोहा)

प्रथम पद्मिनी चित्रनी, जुवती जाति प्रमान।
बहुरि संखनी हस्तिनी 'केसवदास' बखान ॥ १ ॥

अथ पद्मिनी-लक्षण—(दोहा)

सहज सुगंध सरूप सुभ, पुन्य प्रेम सुखदानि।
तनु तनु भोजन रोष रति, निद्रा मान बखानि ॥ २ ॥
सलज सुबुद्धि उदार मृदु हास बास सुचि अंग।
अमल अलोम अनंग-भुव पदमिनि हाटक-रंग ॥ ३ ॥

पद्मिनी, यथा—(कवित्त)

हँसत कहत बात फूल से झरत जात,
गूढ़ भूरि हाव भाव कोक की सी कारिका।
पन्नगी नगी-कुमारि आसुरी सुरी निहारि
डारौं वारि किन्नरी नरी गँवारि नारिका।
ता पै हौं कहा ह्वै जाउं बलि जाउं 'केसोदास',
रची विधि एक ब्रजलोचन की तारिका।
भौंर से भंवत अभिलाष लाख भाँति दिव्य,
चंपे की सी कली वृषभान की कुमारिका ॥ ४ ॥

अथ चित्रिणी लक्षण—(दोहा)

नृत्य गीत कबिता रुचै, अचल चित्त चल दृष्टि।
बहिरति रति अति सुरत-जल मुख सुगंध की सृष्टि ॥ ५ ॥
विरल लोम तन मदन-गृह, भावत सकल सुबास।
मित्र-चित्र-प्रिय चित्रनी, जानहु 'केसवदास' ॥ ६ ॥

चित्रिणी, यथा—(सवैया)

बोलिबो बोलनि को सुनिबो अवलोकनि कै अवलोकनि जो ते।
नाचिबो गाइबो बीन बजाइबो रीझि रिझाइ को जानति तो ते ॥
राग बिरागनि के परिरंभन हास-बिलासनि तें रति कोते।
तौ मिलतौ हरि मित्रहिं कों सखि ! ऐसे चरित्र जी चित्र मँ होते ॥ ७ ॥

---

[१] केसवदास—केसवराइ (बाल०, रस०)। [२] बखान—सुजान (बाल०)
[३] सलज—सहज (बाल० खं०)। [४] भंवत—भ्रमत (रस०)।
[५] बहिरति—बिहरत (बाल०)। मुख-मधु (बाल०, रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ शंखिनी लक्षण–(दोहा)

कोपसील कोबिद-कपट, सलज सलोम-सरीर।
असन-बसन नखदान-रुचि, निलज निसंक अबीर॥ ८॥
छार-गंधजुत मार-जल, तप्त भूरि भग होइ।
सुरतारति अति संखनी, बरनत हैं सब कोइ॥ ९॥

शंखिनी, यथा–(सवैया)

जातु नहीं कदली की गलोनि भली बिधि लै बदरी मुँह लावै।
चाहे न चंपकली की थली मलिनी नलिनी की दिसा नहिं धावै।
जो कोउ 'केसव' नाग-लवंगलता-लवली-अवलीनि चरावै।
खारक दाख खवाइ मरौ कोउ ऊँटहिं ऊँट-कटारोई भावै॥ १०॥

अथ हस्तिनी-लक्षण–(दोहा)

थूल अंगुरी चरन मुख अधर भृकुटि कटि बोल।
मदन-सदन रद कंधरा मंद चालि चित लोल॥ ११॥
स्वेद मदन-जल द्विरद-मद-गंधित भूरे केस।
अति तीछन वहु लोम तन, भनि हस्तिनि इभ-भेस॥ १२॥

हस्तिनी, यथा–(सवैया)

सब देह भई दुरगंधमई मति अंध दई सुख पावत कैसे।
कछु साल तें लोम बिसाल से हैं श्रुति ताड़न 'केसव' बोल अनैसे।
अलि ज्यों मलिनी नलिनो तजि कै करिनी के कपोलनि मंडित तैसे।
छिति छोड़ि कै राजिसिरी बस-पाप निरै-पद राज बिराजत जैसे॥ १३॥

(दोहा)

ता नायक की नायिका, ग्रंथनि तीन प्रमान।
स्वीया परकीया अवर स्वीया परकीया न॥ १४॥

अथ स्वकीया-लक्षण–(दोहा)

सँपति बिपति जो मरत हू, सदा एक अनुहारि।
ताहि सुकीया जानियै, मन-क्रम-बचन बिचारि॥ १५॥

स्वकीया-भेद–(दोहा)

मुग्धा मध्या प्रौढ़ गति, तिनकी तीनि बिचारि।
एक एक की जानियहु, चारि चारि अनुहारि॥ १६॥

---

[१०] लै–हो (नवल०)। दिसा०–दिसानि सिधावै (नवल०)। ऊँट०–उँट कटेरौई (रस०)।

[११] कटि-कटु (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुग्धा-भेद–(दोहा)

नवलबधू नवयौवना, नवलअनंगा नाम।
लज्जा लियें जु रति करै, लज्जाप्राय सु बाम ॥१७॥
तासों मुग्धा नवबधू, कहैं सयाने लोइ।
दिन दिन दुति दूनी बढ़ै, बरनि कहै कबि कोई ॥१८॥

यथा–(सवैया)

मोहिबो मोहन की गति को गति ही पढ़ो बैन कहा धौं पढ़ैगी।
ओप उरोजनि की उपजे दिन काहि मढ़ै अँगिया न मढ़ैगी।
नैननि की गति गूढ़ चलाचल 'केसवदास' अकास चढ़ैगी।
माई कहाँ यह माइगी दीपति जौ दिन द्वै इहि भाँति बढ़ैगी ॥१९॥

अथ नवयौवना-भूषिता-मुग्धा-लक्षण–(दोहा)

सो नवजोबनभूषिता मुग्धा को यह वेस।
बाल-दसा निकसै जहाँ जोबन को परवेस ॥२०॥

यथा–(सवैया)

'केसव' फूलि नची भृकुटी कटि लूटि नितंब लई बहु काली।
बननि सोच सँकोच सु नैननि छूटि गई गति की चल चाली।
घोसक धीर धरौ न धरौ अब लै तुम कों मिलिबो बनमाली।
वाको अयान निकारन कौं उर आए हैं जोबन के अबिताली ॥२१॥

अथ नवलअनंगा-मुग्धा-लक्षण–(दोहा)

नवलअनंगा होइ सो, मुग्धा 'केसवदास'।
खेलै बोलै बाल-बिधि, हँसै त्रसै सबिलास ॥२२॥

यथा–(कबित्त)

चंचल न हूजै नाथ, अंचल न ऐंचौ हाथ,
सोवै नेक सारिकाहू सुक तौ सुवायो जू।
मंद करौं दीप-दुति चंद-मुख देखियत,
दौरि कै दुराइ आऊँ द्वारि त्यों दिखायो जू।
मृगज-मराल-बाल बाहिरै बिडारि देहुँ,
भायौ तुम्हैं 'केसव' सु मोहू मन भायो जू।

---

[१८] तासों–जासों (नवल०)। कोइ–सोइ (नवल०)।
[२१] नची-नचैं (नवल०)। मिलिबो-मिलऊं (बाल० खं०). मिलिबै (नवल०)।
[२१] इसके बाद निम्नलिखित छंद 'बाल० खं०' तथा 'रस' में अधिक है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छल के निवास ऐसे बचन-बिलास सुनि,
चौगुनो सुरति हूँ तें स्याम सुख पायो जू ॥२३॥

अथ लज्जाप्राया रतिमुग्धा-लक्षण–(दोहा)

मुग्धा लज्जाप्राय-रति, बरनत कबि इहिं रीति।
करै जु रति अति लाज सों पतिहिं बढ़ावति प्रीति ॥२४॥

यथा–(सवैया)

बोली न हौं वे बुलाइ रहे हरि पाइ परे अरु ओलियौ ओड़ी।
'केसव' भेंटिवे कौं भरि अंक छुड़ाइ रहे जक हौं नहिं छोड़ी।
सूधें चितैवे कौं केतो कियो सिर चाँपि उठाइ अँगूठनि ठोड़ी।
मैं भरि चित्त तऊ चितयो न रही गड़ि नैननि लाज निगोड़ी ॥२५॥

मुग्धाशयन-लक्षण–(दोहा)

मुग्धा सोइ रहै नहीं पिय-सँग सुनहु सुजान।
जौ क्योंहूँ सोवै सखी ! सुख नहिं ताहि समान ॥२६॥

यथा–(सवैया)

पाइ परें मनुहारि कियें पलिका पर पाइ धरे भय-भीने।
सोइ गई कहि 'केशव' कैसहूँ कोरहिं कोरिक सौहनि कीने।
साहस कै मुख सों मुख छ्वै छिन में हरि मानि सबै सुख लीने।
एक उसासहिं के उससें सिगरेई सुगन्ध बिदा करि दीने ॥२७॥

धनु-भ्रू धरि लोचन लोलत मेल सु कांड कटाछ की कोर कढ़ी।
मुख माधुरी बानी बसी चतुराई सु 'केसव' मोहन तासु पढ़ी।
कुच तंबू तनें तन लाज बिराजति बार गहै चहुँ ओर मढ़ी।
न बढ़ी दुति बालहिं बालकता हति अंग अनंग की फौज चढ़ी।

मुकता मनिनि की है मुकति-पुरी सी नाक
दारयों दंत दाननि कों हंसती बतीसी है
मोहन के मंत्रनि के अपरानि की सी रेख।
भृकुटी सुबेष मावभेद छबि छी सी है।
चित चतुराई उझकी सी उझके से उर
कुच सकुचौ तौ नयननि उझकी सी है।
'केसोदास' रूप की सी साला प्रेम की सी माला
आजु लौं न देखी सुनी जैसी आजु दीसी है ॥

[२३] त्यों–तौ (नवल०)। [२५] हौं नहिं–मैं पै न (बाल०, रस०)। गड़ि–गहि (बाल०)। [२७] कियें–करैं (बाल०, नवल०)। कोरहिं०–सबै करोरहूँ (नवल०)। सबै–महा (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुग्धा को सुरतु-लक्षण–(दोहा)

मुग्धा सुरत करै नहीं, सपनेहूँ सुख मानि।
छल बल कीने होति है, सुख-शोभा की हानि ॥२८॥

यथा–(कबित्त)

सुखदै सखीनि बीच दै कै सौं हैं द्याइ कै,
खवाइ कछू स्वाइ बस कीनो बरबसु है।
कोमल मृनालिका सी मल्लिका की मालिका सी,
बालिका जु डारी मीड़ि मानुसु कि पसु है।
जानै न बिभात भयो 'केसव' सुनै को बात,
देखौ आनि गात जात भयो किधौं असु है।
चित्र सी जु राखी वह चित्रनी बिचित्र यह,
देखौ धौं नए रसिक या में कौन रसु है ॥२६॥

मुग्धा को मानु–(दोहा)

मुग्धा मान करै नहीं, करै तौ सुनहू सुजान।
त्यों डरपाइ छुड़ाइयै ज्यों डरपै अज्ञान ॥३०॥

यथा–(सवैया)

बोलै न बाल बुलावतहूँ नख-रेख लिखै भुव प्रेम परेखौ।
आपनो हाथ बिलोकि बिलोकि कही तब 'केसव' बुद्धि बिसेखौ।
छोटी बड़ी बिधि-रेख लिखी जुग आयु की रेख सु कौन जु लेखौ।
प्रेम तें बोल सह्यो न पर्‍यो अकुलाइ कह्यो पिय कैसो है देखौ ॥३१॥

अथ मध्या के चतुर्भेद–(दोहा)

मध्या आरुढ़जोबना, प्रगलभबचना जानि।
प्रादुर्भूत मनोभवा, सुरति-बिचित्रा आनि ॥३२॥

अथ मध्या-आरूढ़यौवना-लक्षण–(दोहा)

मध्या-आरुढ़जोबना पूरन जोबनवंत।
भाग सुहाग भरी सदा, भावति है मन-कंत ॥३३॥

यथा–(कबित्त)

चंद को सो भाग भाल भृकुटी कमान ऐसी,
मैन कैसे पैन सर नैननि बिलासु है।

---

[२८] सुख-सिख (बाल०)।
[२६] वह–अति (बाल० खं०); गति (नवल०)। देखौ–कहि (बाल० खं०)।
[३०] सुजान–निदान (बाल०)। त्यों–यों (रस०. बाल० खं०); ज्यों (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नासिका सरोज, गंधवाह से सुगंध बाह,
दारयों से दसन 'केसो' बीजुरी सो हासु है।
भाँइँ ऐसी ग्रींव-भुज, पान सो उदर अरु,
पंकज से पाइ गति हंस की सी जासु है।
देखी है गुपाल एक गोपिका मैं देवता सी,
सोने सो सरीर सब सोंधे को सो बासु है ॥३४॥

अथ प्रगल्भवचना-मध्या-लक्षण—(दोहा)

प्रगलभवचना जानि तिहिं, बरनौं 'केसवदास'।
बचननि माँझ उराहनो, देइ दिखावै त्रास ॥३५॥

यथा—(सवैया)

कान्ह भले जु भले ढँग लागे भलें इन्ह नैननि के रँग रागे।
जानति हौं सबही तुम जानत आपु से 'केसव' लालच लागे।
जाहु नहीं अहो जाहू चले हरि जात जितै दिनहीं बनि बागे।
देखि कहा रहे धोखें परे उबटोगे जू देखौऽब देखहु आगे ॥३६॥

अथ प्रादुर्भूतमनोभवा-मध्या-लक्षण—(दोहा)

प्रादुर्भूतमनोभवा मध्या कहौं बखानि।
तन मन भूषित सोभियै 'केसव' काम-कलानि ॥३७॥

यथा—(सवैया)

आजु मैं देखी है गोप सुता इक, होइ न ऐसी अहीर की जाई।
देखत हीं रहियै दुति देह की देखे तें और न देखी सुहाई।
एक हीं बंक बिलोकनि ऊपर वारैं बिलोकि त्रिलोक-निकाई।
'केसवदास' कलानिधि सो बर बूझियै काम कि मेरी कन्हाई ॥३८॥

अथ सुरतविचित्रा-मध्या-लक्षण—(दोहा)

अति बिचित्रसुरता सु तौ जाकौ सुरत बिचित्र।
बरनत कबि-कुल कौं कठिन, सुनत सुहावै मित्र ॥३९॥

यथा—(कबित्त)

'केसोदास' सबिलास मंदहास जुत,
अबिलोकनि अलापनि को आनंद अपार है।
बहिरति सात पुनि अंतरति सात, पुनि
रति बिपरीतनि को बिबिध बिचार है।

---

[३४] ऐसी—की सी (बाल० खं०)।

[३६] इन्ह—ह्वै है (बाल०); ह्वै ह्वै (रस०)। जितै—जहीं (नवल०)। दिन—नित (बाल० खं०)। उबटोगे—उमिट किये देखिबें (बाल० खं०)

[३८] बूझियै—बुझिहै (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छूटि जात लाज तहाँ भूषन सुदेस केस,
टूटि जात हारे सब मिटत सिंगार है।
कूजि कूजि उठै रति कूजितनि सुनि खग,
सोई तौ सुरत सखी और बिवहार है ॥४०॥

अथ सात बहिर्रति-वर्णन–(दोहा)

आलिंगन, चुंबन, परस, मर्दन नख-रद-दान।
अधर-पान सों जानियै बहिरति सात सुजान ॥४१॥

अथ सात अंतर्रति-वर्णन–(दोहा)

थिति, तिर्यक, सनमुख, बिमुख, अध, ऊरध, उत्तान।
सात अंतरति समुझियै 'केसवराइ' सुजान ॥४२॥

अथ षोडश-शृंगार-वर्णन–(कवित्त)

प्रथम सकल सुचि मंजन अमल बास,
जावक सुदेस केस-पास को सुधारिबो।
अंगराग भूषन बिबिध मुख-बास-राग,
कज्जल-कलित लोल लोचन निहारिबो।
बोलन हँसनि मृदु चातुरी चितौनि चारु,
पल पल प्रति पतिब्रत प्रतिपारिबो।
'केसोदास' सबिलास करहु कुँवरि राधे,
इहिं बिधि सोरह सिंगारनि सिंगारिबो ॥४३॥

अथ सुरतांत–(सवैया)

सुंदरता पय पावक जावक पीक हियें नख-चंद नए हैं।
चंदन चित्र सुधा, बिष अंजन, टूटि सबै मनिहार गए हैं।
'केशव' नैननि नींदमई मदिरा-मद घूमत मोहमए हैं।
केलि कै नागर-नागरी प्रात उजागर सागर-भेष भए हैं ॥४४॥

अथ मध्याधीरादि-भेद-लक्षण–(दोहा)

सिगरी मध्या तीन बिधि धीरा और अधीर।
धीराधीरा तीसरी, बरनत हैं कबि धीर ॥४५॥

---

[४०] पुनि–भाँति (बाल० खं०); सुभ (बाल)। सात–पाँच (बाल० खं०)। पुनि–सुन (नवल०)। तहाँ–जहाँ (बाल० खं०, रस०)।

[४१] जानियै–समझिए (बाल०)।

[४२] उत्तान–उमान (बाल० खं०)। समुझियै–जानिए (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीरा बोलै बक्र बिधि, बानी बिषम अधीर।
पिय सों देइ उराहनो सो धीरा न अधीर ॥४६॥

अथ मध्याधीरा, यथा–(सवैया)

ज्यों ज्यों हुलास सों 'केसवदास' बिलास निवास हिये अवरेख्यो।
त्यों त्यों बढ़्यो उर कंप कछू भ्रम भ्रान्ति भयो किधौं सीत बिसेख्यो।
मुद्रित होत सखी बरहीं मेरे नैन-सरोजनि साँचु कै लेख्यो।
तैं जु कह्यो मुख मोहन को अरबिंद सो है सु तौ चंद सो देख्यो ॥४७॥

अथ मध्या अधीरा, यथा–(कबित्त)

तात को सो गात सब बल बलवीर को सो,
मात को सो मुख महा मोह मन भायो है।
थल सो अचल सील अनल सो चल चित्त,
जल से अमल तेज तेज को सो गायो है।
'केसोदास' बसत अकास के प्रकास घोष,
घट घट घर घर घेरु घनो छायो है।
रति की सी रति नाथ रूप रतिनाथ को सो,
कहौ केसोराइ झूठ कौन यह पायो है ॥४८॥

अथ मध्या धीराधीरा, यथा–(सवैया)

कान्ह भलें जु भलें समुझाइहौं मोह समुद्र को ज्यों उमह्यो हो।
'केसव' आपनो मानिक सो मन हाथ पराएँ दै कौने लह्यो हो।
नैननि ही मिलिबो करियै अब बैननि को मिलिबो तौ रह्यो हो।
जाइ कह्यो तुम जैसें सखीनि सों एहो गुपाल मैं ऐसें कह्यो हो ॥४९॥

अथ प्रौढ़ा-भेद चतुर्विध–(दोहा)

सुनि समस्त-रस-कोविदा चित्र-बिभ्रमा जाति।
अति आक्रामित नायका लुब्धापति सुभ भाँति ॥५०॥

अथ समस्तरसकोविदा-लक्षण–(दोहा)

सो समस्तरसकोबिदा, कोविद कहत बखानि।
जो रस भावै प्रीतमहि ताही रस की दानि ॥५१॥

---

[४६] अधीर-अमीर (नवल०)।
[४७] बढ़्यो-मयो (बाल० खं०)। भ्रांति-मीतु (बाल०, नवल०)।
[४९] अब-सब (नवल०)।
[५०] लुब्धापति-लब्धापति (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथा—(कवित्त)

देखो है गुपाल एक गोपिका मैं देवता सी
सोने तें सलोनी बास सोंधे तें सुहाई है।
सोभा ही सुभाउ अवतार लियो घनश्याम
किधौं यह दामिनीयै कामिनी ह्वै आई है।
देबी कोउ मानवी न दानवी न होइ ऐसी
भानवी न हाय-भाव भारती पढ़ाई है।
'केसोदास' सब सुख साधन की सिद्धि यह
मेरे जान मैन हीं सों मेनका की जाई है ॥५२॥

अथ विचित्रविभ्रमा प्रौढ़ा-लक्षण—(दोहा)

अति बिचित्रविभ्रम सु वह प्रौढ़ा कहत बखानि।
जाकी दीपति दूतिका पियहि मिलावै आनि ॥५३॥

यथा—(सवैया)

है गति मंद मनोहर 'केसव' आनंदकंद हियें उलहे हैं।
भौंह बिलासनि कोमल हासनि अंग सुबासनि गाढ़े गहे हैं।
बंक बिलोकनि कों अवलोकि सुमार ह्वै, नंदकुमार रहे हैं।
एई तो काम के बान कहावत फूलनि के बिधि भूलि कहे हैं ॥५४॥

अथ आक्रामित नायिका प्रौढ़ा-लक्षण—(दोहा)

सो आक्रामित नायिका प्रौढ़ा कहि दै चित्त।
मनसा बाचा कर्मना जिनि बस कीनो मित्त ॥५५॥

यथा—(सवैया)

तो हित गाइ बजावत नाचत बार अनेक सिंगार बनाओ।
जी हू में आन को आनिबो छाड्यो री तौऊ न तेरो भयो मनभायो।
भावै सु तूँ करिबो करि भामिनि भागु बड़े बस तैं करि पायो।
कान्ह त्यों सूधे जु चाहति नाहि सु चाहति है अब पाइ लगायो ॥५६॥

लुब्धापति प्रौढ़ा-लक्षण—(दोहा)

सो लुब्धापति जानियै, 'केसव' प्रगट प्रमान।
कानि करै पति कुल सबै प्रभुता प्रभुहि समान ॥५७॥

---

[५२] देवता सी-अनूप रूप (बाल; नवल०)।
[५४] उलहे-उमहे (नवल०)
[५५] कहि दै-करिबे (नवल०)। जिनि-जिहि (बाल०)।
[५६] छाड़्यो री-छाड़ियो (नवल०)। तैं करि-चौकड़ि (नवल०), है करि (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथा–(सवैया)

आजु विराजत हैं कहि 'केसव' श्रीवृषभानु-कुमारि कन्हाई।
बानी बिरंचि बहिक्रम काम रची जु बची सु बधूनि बनाई।
अंग विलोकि त्रिलोक में ऐसी को नारि नहीं जिन नारि नवाई।
मूरतिवंति सिंगारि समीप-सिंगार कियें जनु सुंदरताई ॥५८॥

अथ प्रौढ़ा धीरा-लक्षण–(दोहा)

आदर माँझ अनादरै, प्रकट करें हित होइ।
आकृति आप दुरावई, प्रौढ़ा धीरा दोइ ॥५९॥

प्रौढ़ा सादरा धीरा, यथा–(सवैया)

आवत देखि लिये उठि आगें ह्वै, आपुहीं 'केसव' आसन दीनो।
आपुहीं पाइ पखारि भलें जल, पानो को भाजन लाइ नवीनो।
बीरी बनाइ कै आगें धरी, जब बैहर कों कर बीजना लीनो।
बाँह गही हरि ऐसें कह्यो हँसि, मैं तौ इतो अपराध न कीनो ॥६०॥

अथ आकृतिगुप्ता प्रौढ़ा धीरा, यथा–(सवैया)

चितवौ चितवाँएँ हँसाँएँ हँसौ हौ, बुलाएँ तें बोंलौ रहौ नतु मौनें।
सौंह अनेकनि आवहु अंक, करौ रति कों प्रति रैन की रौनें।
खवाएँ तें खाहु बरचाइ बिरी, जनु आई हौ 'केसव' आजु ही गौनें।
मोहन के मन मोहन कौं, सु कहौ यह धौं सिखई सिख कौनें ॥६१॥

पुनर्यथा–(सवैया)

हित कै इत देखहु, देख्यो सबै, हित बात सुनौ, जु सुनी सबहीं हैं।
यह तौ कछु और, वहै सब ही अरु, सौंह करौऽब करी जु तहीं हैं।
समुझाइ कहौं, समुझीं सब 'केसव' झूठीं सबै हम सों जु कहीं हैं।
मान कियो, अपमान करौ, तौ हँसौं अब के, हँसिबे कों रहीं हैं ॥६२॥

अथ प्रौढ़ा अधीरा-लक्षण–(दोहा)

पति को अति अपराध गनि हतन कहै हित मानि।
कहत अधीरा प्रौढ़ तिहिं 'केसवदास' बखानि ॥६३॥

यथा–(सवैया)

हौं सुख पाइ सिखाइ रही सिख सीखे न ये सखि तें हू सिखाई।
मैं बहुतै दुख पाइहू देख्यो पै 'केसव' क्यों हूँ कुटेव न जाई।

---

[५८] बची-बरी (नवल०)।
[६०] जब बैहर-जबै हरि (नवल०)। अपराध न-अवराधन (नवल०)।
[६१] बरचाइ-औ बिरी (नवल०)। सु कहौ०—तोहि नहीं (नवल०)।
[६२] सबहीं-निबहीं (नवल०)। अरु-अब (बाल० तं०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दंड दियें बिनु साधुनि हू सँग छूटत क्यों खल की खलताई।
देखहु दै मधु की पुट कोटि मिटै न घटै विष की विषमाई ॥६४॥

अथ प्रौढ़ा धीराधीरा-लक्षण–(दोहा)

मुख रूखी बातैं कहै जिय में पिय की भूख।
धीराधीरा जानियै जैसी मीठी ऊख ॥६५॥

यथा–(सवैया)

हो मन मैलो न जौलौं कछु अब छाड़हु बोलिबो बोल हँसौंहैं।
'केसव' औरनि सों रसरास रस्यो रसबाद सबै हम सौंहैं।
देखहु धौं इक बार सकोचन आरस-लोचन आरसी-सौंहैं।
आए जू वैसेई साज सों आजु सु भूलि गई पिय काल्हि की सौंहैं ॥६६॥

इति स्वकीया।

अथ परकीया-लक्षण–(दोहा)

सब तें पर परसिद्ध जग ताकी प्रिया जु होइ।
परकीया तासों कहैं परम पुराने लोइ ॥६७॥

अथ परकीया-भेद–(दोहा)

परकीया द्वै भाँति पुनि ऊढ़ा एक अनूढ़।
जिन्हैं देखि सुनि होत बस संतत मूढ़ अमूढ़ ॥६८॥

अथ ऊढ़ा-अनूढ़ा-लक्षण–(दोहा)

ऊढ़ा होइ विवाहिता अविवाहिता अनूढ़।
तिनके कहौं बिलास सब 'केसव' गूढ़-अगूढ़ ॥६९॥

ऊढ़ा, यथा–(सवैया)

बैठी सखीनि की सोभै सभा सब ही के सु नैननि माँझ बसै।
बूझत बात बरयाइ कहै मन ही मन 'केसवराइ' हँसै।
खेलति है इत खेल उतै पिय चित्त खिलावति यों बिलसै।
कोऊ जानै नहीं दृग दौरि कबै कित ह्वै हरि-आनन छ्वै निकसै ॥७०॥

अनूढ़ा, यथा–(सवैया)

बैठी हुती व्रजनारिन में बनि श्रीबृषभानु-कुमारि सभागी।
खेलति ही सखी चौपरि चारि भई तिहिं खेल खरी अनुरागी।
पीछे तें 'केसव' बोलि उठे सुनि कै चित्त चातुरी आतुरी जागी।
जानी न काहू कबै हरि के सुर-मारगहीं सर सी दृग लागी ॥७१॥

---

[६४] पाइ-खाइ (नवल०)। [६६] जौलौं-बोलौं (नवल०)।
[७१] मारगहीं-मार गहीं (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दोहा)

काहू सों न कहै कछू बात अनूढ़ा गूढ़।
सखी सहेली सों कहै ऊढ़ा गूढ़ अगूढ़ ॥७२॥

ऊढ़ा-वचन, यथा– (सवैया)

केसवराइ की सौंहैं ककै कछू एकनि आपु में होड़ परी।
एक चितै मुसिकाइ इतै उत बात कहैं बहु भाइ-भरी।
चारु चकोर-बिलोचन-भा सी चहूँ दिसि तें अँगुरी पसरी।
सखि काल्हि गई हुती गोकुल हौं सबहीं मिलि द्वैज को चंद करी ॥७३॥

(दोहा)

जग नायक की नायिका बरनी 'केसवदास'।
तिनके दर्सन-रस कहौं सुनौ प्रछन्न प्रकास ॥७४॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां
स्वकीयापरकीयादिभेदवर्णनं नाम तृतीयः प्रभावः ॥३॥

४

अथ दर्शन-लक्षण– (दोहा)

ये दोऊ दरसैं दरस होहिं सकाम सरीर।
दरसन चारि प्रकार को बरनत हैं कवि धीर ॥१॥
एक जु नीकं देखियै दूजें दरसन चित्र।
तीजें सपनें देखियै चौथें श्रवननि मित्र ॥२॥

साक्षात् दर्शन, यथा– (दोहा)

नीद भूख दुति देह की गई सुनत हीं जाहि।
को जानै ह्वैहै कहा 'केसव' देखें ताहि ॥३॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न साक्षात् दर्शन, यथा– (सवैया)

कहि 'केसव' श्रीवृषभानु-कुमारि सिंगार सिंगारि सबै सरसै।
सबिलास चितै हरि नायक त्यौं रतिनायक सायक से बरसै।
कबहूँ मुख देखति दर्पन लै उपमा मुख की सुखमा सरसै।
जनु आनंदकंद सँपूरन चंद दुर्‌यो रबिमंडल में दरसै ॥४॥

[१] कवि–मति (नवल०, बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराधिकाजू को प्रकाश साक्षात् दर्शन, यथा—(सवैया)

पहिलें तजि आरस आरसी देखि घरीकु घसे घनसारहि लै।
पुनि पोंछि गुलावति लौं छि फुलेल अंगौछे में आछे अंगौछनि कै।
कहि 'केसव' मेद जुबाद सों माँजि इते पर आँजे मैं अंजन दै।
बहुर्‍यौ दुरि देखौं तो देखौं कहा सखि लाज तौ लोचन लागियै है ॥५॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न साक्षात् दर्शन, यथा—(सवैया)

भाल गुही गुन लाल लटैं लपटीं लर मोतिन की सुखदैनी।
ताहि बिलोकति आरसी लै कर आरस सों इक सारसनैनी।
'केसव' कान्ह दुरें दरसी परसी उपमा मति की अति पैनी।
सूरजमंडल में ससिमंडल मध्य धसी जनु जाइ त्रिबैनी ॥६॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश साक्षात् दर्शन, यथा—(सवैया)

इक तौ उर और उरोज अनूपम तैसो मनोहर हार महा री।
सखि चित्त चलै तरुनीनिहूँ को तरुनैन की 'केसव' बात कहा री।
हितु सों हित की कहि आवति है पर कौ लगि होंवंरी कौतुकहारी।
अब अंचल दै, नँदलाल बिलोकत री दधि नोखी बिलोवनहारी ॥७॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न चित्र-दर्शन, यथा—(सवैया)

लोचन ऐंचि लिये इति कों मन की गति जद्यपि नेह-नहीं है।
आनन आइ गए श्रम-सीकर रोम उठे तन कंप लही है।
तासों कहा कहियै कहि 'केसव' लाज-समुद्र में बूड़ि रही है।
चित्रहु में हरि-मित्रहि देखत यों सकुची जनु बाँह गही है ॥८॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश चित्र-दर्शन, यथा (कवित्त)

'केसोदास' नेह दसा-दीपक सँजोइ कैसें,
ज्योति ही के ध्यान तम-तेजहि नसायहै।
आँखिन सों बाँधें अन्न काहू की बुझानी भूख ?
पानी की कहानीं रानी ! प्यास क्यों बुझायहै।

---

[५] घरीकु—कछुक (बाल० खं०)। जुवाद—जवादि (रस०)। बहुर्‍यौ—बहुर्‍यौ दुरि देखौं जौ देखौं तो देखि री (बाल०); बहुर्‍यौ फिरि देखि जौ देख्यौ है तो देखि री (बाल० खं०)।

[६] मति की—मति ते (बाल०खं०)। जनु ताहि—मनु ताहि (रस०)।

[७] कहि०—कहि ही परि आवति (बाल०, बाल० खं०)। होंवें री—होहुँ री (बाल०, बाल० खं०)।

[८] गति—मति (बाल० खं०)। तन—अति कंपसी ही है (बाल० खं०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
R
029
के ४८ के.१:२
79590

एरी मेरी इंदुमुखी ! इंदीवर-नैनी लिखें
इंदिरा के मंदिर में संपति सिधायहै।
ऐसे दिन ऐसें हीं गँवावति गँवारि कहा,
चित्र देखें मित्र के मिले को सुख पायहै ? ॥९॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न चित्र-दर्शन, यथा– (कवित्त)

रूठिवे को तूठिवे को मृदु मुसिक्याय कै
बिलोंकिवे को भेद कछू कह्यो न परतु है।
'केसोदास' बोलें बिनु बोलनि के सुनें बिनु,
हिलन मिलन बिनु मोहि क्यों सरतु है।
कौ लगि अलोनो रूप प्याय-प्याय राखौं नैन,
नीर देखें मीन कैसें धीरज धरतु है।
चित्रिनी बिचित्र चित्र नीकें हीं चितैयै मन,
चित्र में चिताएँ चित्त चौगुनो जरतु है ॥१०॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश चित्र-दर्शन, यथा– (सवैया)

अंतरिच्छ-गच्छनीनि मच्छनी सुलच्छनीनि,
अच्छी अच्छी अच्छनीनि छवि छमनीय है।
किन्नरी नरी सुनारि पन्नगी नगी-कुमारि
आसुरी सुरीनिहूँ निहारि नमनीय है।
भोगिन की भामिनी कि देह धरें दामिनी कि,
काम हीं की कामिनी कि ऐसी कमनीय है।
चित्रहू में चित्तहि चुरावति है 'केसोदास',
राम की सी रमनी रमा सी रमनीय है ॥११॥

अथ स्वप्न-दर्शन, लक्षण– (दोहा)

'केसव' दर्सन स्वप्न को, सदा दुरचोई होय।
कबहूँ प्रगट न जानियै यह जानैं सब कोय ॥१२॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न स्वप्न-दर्शन, यथा– (सवैया)

आतुर ह्वै उठि दौरी अली, जन आतुर ज्यों गहियै सु गही त्यों।
हो मेरी रानी कहा भयो तो कहुँ बूझति 'केसव' बूझियै री ज्यों।
डीठि लगी किधौं प्रेत लग्यो कि लग्यो उर प्रीतम जाहि डरी यों।
आनन सीकर सी कहियै धक सोवत तें अकुलाइ उठी क्यों ॥१३॥

---

[९] बुझानी-न मागी (नवल०)। क्यों-कैसे कै (बाल० खं०)। मंदिर में-मंदिर क्यों (नवल०)। सिधायहै-समाइहै (बाल० खं०)। देखें-बिना (नवल०)।
[१२] जानियै-देखिये (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न स्वप्न-दर्शन, यथा– (कवित्त)

नख-पद-पदवी को पावै पद द्रौपदी न,
एकौ बिसौ उरबसी उर में न आनिबी।
लोम सी पुलोमजा न तिल सी तिलोत्तमा न,
मैलहू समान मन मेनका न मानिबी।
जानियै न कौन जाति अबहीं जगाएँ जाति,
जीवन तौ जानिहौं जौ ताहि पहिचानिबी।
बातक सी बानी माँहि भाव-सो भवानी माँहि,
'केसोदास' रति में रतीक ज्योति जानिबी ॥१४॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न श्रवण-दर्शन, यथा– (सवैया)

सौंह दिवाय दिवाय सखी इक बारक काननि आनि बसाए।
जानै को 'केसव' काननि तें कित ह्वै कब नैननि माँझ सिधाए।
लाज के साज धरेई रहे सब नैननि लै मनहीं सों मिलाए।
कैसी करौं अब क्यों निकसैं री हरेंई हरें हिय में हरि आए ॥१५॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश श्रवण-दर्शन, यथा– (कवित्त)

कौ लौं पीहौ कान-रस, रूप की बुझैहै प्यास ?
'केसोदास' कैसें न नयन भरि पीजियै।
बीर की सौं मेरी बीर वारी हे जु वारौं आनि,
नैंक किन हसहि बलाय तेरी लीजियै।
बरसक माँहि यह बैस अलबेली बीतें,
देहौ सुख सखिन क्यों अबहीं न दीजियै।
एरी लड़बावरी अहीरी ऐसी बूझै तोहिं
नाँह सों सनेह कीजै नाँहि सों न कीजियै ॥१६॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न श्रवण-दर्शन, यथा– (कबित्त)

लंघतु है लोक लोक-लीक न उलंघी जात,
सबही तू समुझावै तोहि समुझावै को।
छोड़न कहत तनु तनक न छूटै लाज,
धन मीन राखि दोऊ कोबिद कहावै को।
सोच को सँकोच हू को पूरब-पच्छिम पंथ
'केसोदास' एक काल एक जन धावै को।
दुख-सुख दूरी दुरादूरि हू तें मेरे मन
जैसी सुनी तैसी तोहि आँखिन दिखावै को ॥१७॥

---

[१५] कब-छवि (नवल०)। किन हसहि-हँसि कहि हो (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू को प्रकाश श्रवण-दर्शन, यथा–(कबित्त)

निपट कपटहर प्रेम को प्रकटकर,
बीस बिसे बसीकर कैसें उर आनियें।
काम को प्रहरषन कामना को बरषन
कान्ह को सँकरषन सब जग जानियें।
किधौं 'केसोदास' महि मोहनी को भूषन है
किधौं ब्रजबालनि को दूषन बखानियें।
सुनत हीं छूट्यो धाम बन बन डोलें स्याम,
राधे तेरो नाम कि उचाट-मंत्र मानियें ॥१८॥

(दोहा)

दरस रमन-रमनीनि के कहे परम रमनीय।
प्रगटन प्रेम-प्रभाव अब कहौं कछू कमनीय ॥१९॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां
चतुर्विधदर्शनप्रच्छन्नप्रकाशवर्णनं नाम चतुर्थः प्रभावः ॥४॥

५

अथ दंपति-चेष्टा वर्णन–(दोहा)

तिनके चित की जानि सखि पिय सों कहे सुनाइ।
कहे सखी सों प्रीतमैं आपुन तैं अकुलाइ ॥१॥

श्रीराधिकाजू की सखी को बचन कृष्ण प्रति–(सवैया)

काल्हि की ग्वालि तौ आज हू लौं न संभारति 'केसव' कैसें हू देहै।
सीरी ह्वै जाति, उठै कबहूँ जरि जीव रह्यो कै रही रुचि-रेहै।
कोरि विचार विचारति है उपचारनि के बरसैं सखि मेहै।
कान्ह बुरो जिन मानौ तिहारी बिलोकनि में बिस बीस बिसे है ॥२॥

श्रीकृष्णजू को बचन राधिका की सखी प्रति–(कबित्त)

प्यास ह्वै रही उदास भागी भूख गहि त्रास,
'केसोदास' नींदहू की निंदा नित ठानी है।
मति को मतो न लेय विद्या की बिदाई देय,
सोभा सूकी सेइ सेइ सब सुख सानी है।
विष से लगत गीत केलि की न परतीत,
प्रीत उर पाहुनी सी पचि पहिचानी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो त्रिन कहै को गाथ धीरता न ताके साथ,
मोहिं को मिलावै हाथ लाज के बिकानो है ।।३।।

अथ चेष्टा लक्षण—(दोहा)

पिय सों प्रगटन प्रीति कहँ जितने करैं उपाइ ।
ते सब 'केसोदास' अब बरने सबनि सुनाइ ।।४।।
जब चितवै पिय अनत हीं, तब चितवै निहसंक ।
जानि बिलोकत आपु त्यौं अलिहिं लगावै अंक ।।५।।
कबहूँ श्रुति कंडू करै आरस सों ऐंड़ाइ ।
'केसोदास' बिलास सों बार बार जमुहाइ ।।६।।
झूठे हीं हँसि हँसि उठै कहै सखी सों बात ।
ऐसें मिस हीं मिस प्रिया पियहि दिखावै गात ।।७।।
यों ही पीय प्रियानि प्रति प्रगटत अपनी प्रीति ।
सो प्रच्छन्न प्रकास करि बुधि-बल करत समीति ।।८।।

श्रीराधिकाजू की प्रच्छन्न चेष्टा, यथा—(कवित्त)

चोरि चोरि चित चितवति मुँह मोरि मोरि
काहे तें हँसति हियें हरष बढ़ायो है ।
'केसोदास' की सौं तूँ जँभाति कहा बार बार
बीरी खाइ मेरी बीर आरस जौ आयो है ।
एँड़ सों एँड़ाति अति अंचल उड़ात उर
उघरि उघरि जात गात छबि छायो है ।
फूलि फूलि भेंटति रहति उर भूलि भूलि
भूलि भूलि कहति कछू तें आजु खायो है ।।९।।

श्रीराधिकाजू की प्रकाश चेष्टा, यथा—(कवित्त)

मेरो मुख चूमें तेरी पूरी साध चूमिबे की
चाटें ओस असु क्यों सिरात प्यास-डाढ़े हैं ।
छोटे छोटे कर कहा छ्वावति छबीली छाती,
छ्वावौ जाके छ्वाइबे के अभिलाष बाढ़े हैं ।
खेलन जौ आई हो तौ खेलो जैसें खेलियत
'केसोदास' की सौं तैं ये कौन खेल काढ़े हैं ।
फूलि फूलि भेंटति है मोहिं कहा मेरी भटू
भेंटै किनि जाइ जे वे भेंटिबे कौं ठाढ़े हैं ।।१०।।

---

[३] धीरता०—धीरजता लैकै साथ (नवल०) ।
[६] बीरी खाइ—बिसिखाह (नवल०) ।
[१०] सिरात--री रात (नवल०) । भेंटै किनि जाइ-भेंटत ना ताहि (बाल० खं०) । बार बार-बारि बारि (बाल० रस०) ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू की प्रच्छन्न चेष्टा, यथा–(कवित्त)

छोरि छोरि बाँधौ पाग आरस सों आरसी लै
अनत हीं आन भांति देखत अनैसे हौ।
तोरि तोरि डारत तिनूका कहौ कौन पर,
कौन के परत पाइ बावरे ज्यों ऐसे हौ।
कबहूँ चुटकि देति चटकि खुजावौ कान,
मटकि एँड़ाउ जुरी ज्यों जँभात तैसे हौ।
बार बार कौन पर देत मनिमाला मोहि,
गावत कछू के कछू आजु कान्ह कैसे हौ ॥११॥

श्रीकृष्णजू की प्रकाश चेष्टा, यथा–(सवैया)

जा लगि लाँच लुगाइनि दै दिन नाच नचावत साँझ पहाँ ऊँ।
'केसव' मन्त्र करौ बसकारक हारक जंत्र कहाँ लौं गनाऊँ।
हारि रहे हरि क्यों हूँ मिली न मिलाऊँ जौ ताहि तौ माँगौं सो पाऊँ।
ठाढ़ी वै जाइ मिलौ मिलिवे कहँ और कछू कनियाँ करि लाऊँ ॥१२॥

अथ स्वयंदूतत्व-लक्षण –(दोहा)

जौ क्यों हू न मिलैं कहूँ 'केसव' दोऊ ईठ।
तौ तब अपने आपहीं बुधिबल होत बसीठ ॥१३॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न स्वयंदूतत्व, यथा–(सवैया)

दूरि तें देखिबे कौं ह्वै ह्वै दीन मनाई हुती लिखि ही लिखि चीठी।
देखें मिल्यो मनु हौं हू मिली मिलि खेलिबे हूँ कौं मिली मति मीठी।
ऐसें में और चलाइहौ 'केसव' कैसहुँ कान्ह-कुमार दै ढीठी।
लागै न बार मृनाल के तार ज्यों टूटैगी लाल हमैं तुम्हैं ईठी ॥१४॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश स्वयंदूतत्व, यथा–(सवैया)

धाइ नहीं घर, दाई परी जुर, आई खिलाई की आँखि बहाऊँ।
पौरियै आवै रतौंधु इते पर ऊँचो सुनै सु महा दुख पाऊँ।
कान्ह निबेरहु न्याउ नयो इनि आलिन कौ लगि हौं बहराऊँ।
ये सब मो संग सोवन आवैं कि हौं इनके सँग सोवन जाऊँ ॥१५॥

---

[१४] लागै०–ह्वै है न बार मुराति कें (रस०), मुरारि कें (बाल०)।
निम्नलिखित छंद 'बाल० खं०' और 'नवल०' की प्रतियों में और मिलता है—

छुवो जनि हाथ सों हाथ हिये पल ही पल बाढ़त प्रेमकला।
न जानिये जी में कहा बसी जाइ चले फिरि 'केसव' कौन चला।
भले हि भले निबहौ जि भली इह देखिबे ही की हला हू भला।
मिलै मन तो मिलिबोई कहूं मिलिबो न अलौकिक नंदलला ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्ण जू को प्रच्छन्न स्वयंदूतत्व, यथा—(कवित्त)

आपने हीं भाइ के ये सोहत सरीक से, वे
'केसोदास' दास ज्यों चलत चित लीने हैं।
आपु हीं अठाउ के ये लेत नाऊँ मेरो, वे तौ
बापुरे मिलाप के सँलाप करि हीने हैं।
राधिकै सुनाइ कै कहत ऐसें घनस्याम,
सुबल को लै लै नाम काम भय-भीने हैं।
साथ लै सखानि अब जैबो वन छाड़यो हम,
खेलिवे कौं संग सखा साखामृग कीने हैं॥१६॥

श्रीकृष्ण जू को प्रकाश स्वयंदूतत्व, यथा—(सवैया)

बन जैये चली कोऊ ठाली हे 'केसव' हौ तुम हें तौ अरो अरिहौ।
कछु खेलियै खेलि न आवत आजु ही भूल्यो न भूल्यो गरें परिहौ।
हितु हे हिय में किधौं नाहिं तऊ हितु नाहि हिये तु लला लरिहौ।
हम सों यह बूझियै ऐसी कहौऽब्र कही हो कही सु कहा करिहौ।

अन्यच्च, यथा—(कवित्त)

'केसोदास' घर घर नाचत फिरत गोप,
एक परे छकि ते मँरेई गुनियत हैं।
बारुनी के बस बलदाऊ भए सखा सब,
संग लै को जैयै दुख सीस धुनियत हैं।
मोहिं तो गएँ हीं बनै दीह दीपमाला पाइ,
गाइनि सँवारिबे कौं चित्त चुनियत हैं।
जो न बसौं लोलिनैनि लेरुवा मरहिं सब,
खरक खरेई आज सूने सुनियत हे॥१८॥

(दोहा)

ऊढ़ा पुनि यहि भाँति करि बहु बिधि हितनि जनाइ।
आपुन हीं तें लाज तजि पियहिं मिलै अकुलाइ॥१९॥

यथा—(कवित्त)

पंथ न थकत पल मनोरथ-रथनि के
'केसोदास' जगमग जैसें गाए गीत में।
पवन बिचारि चक्र चंक्रमन चित चढ़ि,
भूतल अकास भ्रमै धाम जल सोत में।

---

[१६] संलाप-सताप (नवल०)। राधिकै प्रिया को (नवल०)। भय-रस (बाल०)।
[१८] दुख-देख (बाल० खं०)। बसौं-मिलै (बाल० खं०)। खरक-दरिक (बाल० खं०)। यह छंद 'बाल०' में नहीं है।
[१९] पियहिं-पतिहि (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को लौं राखौं थिर बपु बापी कूप सर सम,
हरि बिनु कीनें बहु बासर बितीत मैं।
म्यान गिरि फोरि तोरि लाज-तरु जाइ मिलौं,
आपु ही तें आपु गाज्यौ आपुनिधि प्रीतमैं ॥२०॥

अन्यच्च, यथा–(सवैया)

जाति भई संग जाति लै कीरति 'केसव' है कुल सों हित फूट्यो।
गर्व गयो गुन जोबन रूप को पुन्य सु तौ पल ही पल खूट्यो।
कान्ह निहारियै आन कियें कहौं लाज सों नीको ह्वै नातो ई टूट्यो।
छाँड्यो सबै हम हेरि तुम्हें तुम पै तनकौ कपटौ नहिं छूट्यो ॥२१॥

(दोहा)

अधिक अनूढ़ा लाज तें पिय पै जाइ न आप।
क्यों हूँ करि सखियै कहैं ताके उर को ताप ॥२२॥

यथा–(सवैया)

जानै को 'केसव' कौने कह्यो कब कान्ह हमारे हिंडोरनि भूले।
पान न खाइ न पान्यों पियै तब तें भरि लोचन लेत समूले।
जाहु नहीं चलि बेगि बलाइ ल्यौं लेहु सकेलि कहा यह भूलै।
जानत हौ वह कामकली कुँभिलाइ गएँ बहुरचौ फिरि फूलै ॥२३॥

अथ प्रथम-मिलन-स्थान-वर्णन–(दोहा)

जनी सहेली धाइ घर सूने घर निसि चार।
अति भय उत्सव ब्याधि मिस न्यौते सु बन-बिहार ॥२४॥
इन ठौरनि ही होतु है प्रथम मिलन संसार।
'केसव' राजा रंक कों रचि राखे करतार ॥२५॥

जनी के घर को मिलन, यथा—(कबित्त)

बेषु कै कुमारिका को ब्रज की कुमारिकानि
माँझ साँझ 'केसोदास' त्रास पग पेलि कै।
काम की लता सी चपला सी प्रेम पासी सी है
राधिका के बुधिबल कंठ भुज मेलि कै।
दौरि दौरि दुरि दुरि पूरि पूरि अभिलाष
भाँति भाँति के अनूप-रूप बहु केलि कै।
जनी के अजिर आज रजनी में सजनी री
साँची करी स्याम चोरमिहचनी खेलि कै ॥२६॥

---

[२०] फोरि-कोरि (बाल०)।
[२३] लोचन-आँखियो (बाल०)। सु बन-विपिन (बाल० खं०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहेली के घर को मिलन, यथा–(कबित्त)

नैननि के तारनि में राखौ प्यारे पूतरी कै
मुरली ज्यों लाइ राखौ दसन-बसन में।
राखौ भुज बीच बनमाली बनमाला करि
चंदन ज्यों चतुर चढ़ाइ राखौ तन में।
'केसोराइ' कलकंठ राखौ बलि कठुला कै
करम करम क्यों हू आनी हैं भवन में।
चंपककली ज्यों कान्ह सूँघि सूँघि देवता ज्यों
लेहु मेरे लाल! इन्हें मेलि राखौ मन मैं॥२७॥

धाइ के घर को मिलन, यथा–(कबित्त)

हँसत खेलत खेल मंद भई चंद-दुति
कहत कहानी और बूझत पहेली-जाल।
'केसोदास' नींद-बस अपने अपने घर
हरें हरें उठि गए बालिका सकल बाल।
घोरि उठे गगन सघन घन चहूँ दिसि
उठि चले कान्ह धाइ बोलि उठी तिहिं काल।
आधी राति अधिक अँध्यारे माँझ जैहौ कहाँ
राधिका की आधी सेज सोइ रहौ प्यारे लाल॥२८॥

सूने घर को मिलन, यथा–(कबित्त)

देखत ही चित्र सूनी चित्रसाला बाला आजु
रूप की सी माला राधा रूपकु सुहाए री।
नूपुर के सुरनि के अनुरूप तानैं लेति
पग तल ताल देति अति मन भाए री।
ऐसे में दिखाई दीनी औचकाँ, कुँवर कान्ह
जैसे भए गात तैसे जात न बताए री।
केसोदास' कहे परै अलज सलज से न
जलज से लोचन जलद से ह्वै आए री॥२९॥

निसि-चार को मिलन, यथा–(सवैया)

एक समै सब देखन गोकुल गोपी-गोपाल-समूह सिधायो।
राति ह्वै आई चले घर कों दसहूँ दिसि मेह महा मढ़ि आयो।

---

[२७] केसोराइ०—केसोराइ गल मेलि राखो कलकंठी कंठा कल कठुला कै (बाल० खं०)।

[२८] बस-सिसु (नवल०)। बालिका-बालिक (नवल०)। प्यारे-नंद (नवल०)।

[२९] राधा-जनु (बाल० खं०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरो बोल ही तें समुझै कहि 'केसव' यों छिति में तम छायो।
ऐसे में स्याम सुजान बियोग बिदा कै दियो सु कियो मनभायो ॥३०॥

अतिभय कौ मिलन, यथा–(कवित्त)

जानि आगि लागी बृषभान के निकट भौन
दौरि ब्रजबासी चढ़े चहूँ दिसि धाइ कै।
जहाँ तहाँ सोर भारी भीर नर नारिनि की
सब ही की छूटि गई लाज हाइ भाइ कै।
ऐसे में कुँवर कान्ह सारो सुक बाहिर कै
राधिका जगाई और जुवती जगाइ कै।
लोचन बिसाल चारु चिबुक कपोल चूमि,
चंपे की सी माल लाल लीनी उर लाइ कै ॥३१॥

उत्सव को मिलन, यथा–(कवित्त)

बल की बरस-गाँठि ताकी राति जागिबे कौं,
आईं ब्रजसुंदरी सँवारि तन सोनो सो।
'केसोदास' भीर भई नंदजू के मंदिरनि
अध मध ऊरध बच्यो न कोऊ कोनो सो।
गावति बजावति नचति नाना रूप करि
जहाँ तहाँ उमंगत आनंद को ओनो सो।
साँवरे की सूनी सेज सोवत हीं राधिका जू
सोए आनि साँवरेऊ मानि मन गोनो सो ॥३२॥

ब्याधि-मिस को मिलन, यथा–(सवैया)

सोधि निदाननि दान दए उपचार बिचार कियें न धिरानी।
बेद के सासन ब्याधि-बिनासन होम-हुतासन हू न सिरानी।
'केसव' बेगि चलौ बलि बोलति दीन भई बृषभान की रानी।
आए हे मेटि मरू करि कै बहुरयौ उनिके वह पीर पिरानी ॥३३॥

न्यौते के मिस को मिलन, यथा–(कबित्त)

न्यौति कै बुलाई हुती बेटी बृषभानु जू की,
जेंबे कौं जसोधा रानी आनी हैं सिंगारि कैं।
भोजन कै, भवन बिलोकिवे कौं पान खात,
ऊपर अकेली गई आनंद बिचारि कै।
देखत देखत हरि भावते कौं भागी, देखि
दौरि गही ब्याल ऐसी बेनी डर डारि कै।

---

[३१] भाइ–हाइ (बाल०)।
[३२] अध मध–मधि अध (बाल०)।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar
[३३] न घिरानी–नंदरानी (बाल० खं०)। बेगि–क्योंहू (बाल०)।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेंटी भरि अंक मनभायो करि छाड़्यो, मुहुँ
केसरि सों मांड़ि लई बेसरि उतारि कै ॥३४॥

वनविहार के मिस को मिलन, यथा–(सवैया)

देहि री काल्हि गई कहि दैन, पसारहु ओलि भरौ पुनि फेंटी।
छाड़ौ नहीं मग छाड़ौं जौ या पै छुड़ावै बिलोकनि लाज-लपेटी।
बात सँभारि कहौ सुनिहै कोऊ जानत हौ यह कौन की बेटी ?।
जानत हैं बृषभानु की है, पर तोहि न जानत कौन की चेटी ॥३५॥

जलविहार को मिलन, यथा–(सवैया)

हरि राधिका मानसरोवर कें तट ठाढ़े री हाथ सों हाथ छियें।
पिय के सिर पाग प्रिया मुकताहल छाजत माल दुहूँनि हियें।
कटि 'केसव' काछनी सेत कछें सबही तन चंदन चित्र कियें।
निकसे छिति छीरसमुद्र ही तें संग श्रीपति मानहुँ श्रीहि लियें ॥३६॥

अन्यच्च, यथा–(सवैया)

रितु ग्रीषम के प्रतिबासर 'केसव' खेलत हैं जमुना-जल में।
इत गोपसुता उहि पार गुपाल बिराजत गोपनि के दल में।
अति बूड़त हैं गति मीननि की मिलि जाइ उठे अपने थल में।
इहि भांति मनोरथ पूरि दोऊ दुरि दूरि रहैं छबि सों छल में ॥३७॥

(दोहा)

इहि बिधि राधा-रमन के बरने मिलन बिसेखि।
'केसवदास' निबास बहु बुधिबल लीजहु लेखि ॥३८॥
और जु तरुनी तीसरी क्यों बरनौं यहि ठौर।
रस में बिरस न बरनियै कहत रसिक-सिरमौर ॥३९॥
ये सब जितनी नायिका बरनी मति-अनुसार।
'केसवदास' बखानियहु, बुधि-बल अष्ट प्रकार ॥४०॥
प्रथम मिलन थल में कहे अपनी मति-अनुसार।
हावभाव बर्नन करौं सुनि अब बहुत प्रकार ॥४१॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां श्रीराधाकृष्ण-चेष्टा-दर्शन-मिलनस्थानवर्णनं नाम पंचम प्रभावः ॥५॥

---

[३५] देहि री–दै दधि (नवल०)। कौन०–को महरेटी (बाल० खं०)।
[३६] कछें–लसी (बाल०)। [३७] गोपनि०–गुवालनि के गन मैं (बाल०)।
[३८] निवास–बिलास (बाल० खं०) [३९] ३९ से ४१ तक के छंद 'रस०' में नहीं हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६

अथ भाव-लक्षण—(दोहा)

आनन लोचन बचन मग, प्रकटत मन की बात।
ताही सों सब कहत हैं भाव कबिनि के तात ॥१॥
भाव सु पंच प्रकार के, सुनि बिभाव अनुभाव।
थाई सात्विक कहत हैं, व्यभिचारी कबिराव ॥२॥

अथ विभाव-वर्णन—(दोहा)

जिन तें जगत अनेक रस, प्रगट होत अनयास।
तिन सों विर्मात बिभाव कहि बरनत 'केसवदास' ॥३॥

अथ विभाव-नामभेद-वर्णन—(दोहा)

सब बिभाव द्वै भाँति के 'केसवदास' बखानि।
आलंबन इक दूसरो उद्दीपन मन आनि ॥४॥
जिन्हैं अतन अवलंबई ते आलंबन जानि।
जिन तें दीपति होति है ते उद्दीप बखानि ॥५॥

अथ आलंबन-स्थान-वर्णन—(छप्पय)

दंपति जोबन रूप जाति लच्छन जुत सखि जन।
कोकिल कलित बसंत फूल फल दल अलि उपबन।
जलचर जलजुत अमल कमल-कमला कमलाकर।
चातिक मोर सु सब्द तड़ित घन अंबुद अंबर।
सुभ सेज दीप सौगंध गृह पान गान परिधान मनि।
नव नृत्य-भेद बीनादि-रव आलंबन 'केसव' बरनि ॥६॥

अथ उद्दीपन-वर्णन—(दोहा)

अवलोकनि आलाप परिरंभन नख-रद-दान।
चुंबनादि उद्दीप ये मर्दन परस प्रमान ॥७॥

अथ अनुभाव-वर्णन—(दोहा)

आलंबन उद्दीपन के, जो अनुकरन बखान।
ते कहिये अनुभाव सब, दंपति प्रीति-विधान ॥८॥

अथ स्थायी भाव-वर्णन—(दोहा)

रति हांसी अरु सोक पुनि क्रोध उछाह सुजान।
भय निंदा बिस्मय सदा, थाई भाव प्रमान ॥९॥

---

[४] आनु–मानु (बाल॰ खं॰)।
[६] कमला–मधुकर (बाल॰)। मान–खान (नवल॰)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ सात्विक भाव-वर्णन--(दोहा)

स्तंभ स्वेद रोमांच सुरभंग कंप बैबन्य।
आंसू प्रलय बखानियै आठो नाम अनन्य ॥१०॥

अथ व्यभिचारी भाव-वर्णन--(दोहा)

भाव जु सबही रसनि में उपजत 'केसवराय'।
बिना नियम तिन सों कहैं व्यभिचारी कबिराय ॥११॥

अथ व्यभिचारी-नाम-वर्णन--(दोहा)

निर्वेद ग्लानि संका तथा, आलस दैन्य 'रु मोह।
स्मृति धृति ब्रीड़ा चपलता श्रम मद चिंता कोह ॥१२॥
गर्ब हर्ष आवेग पुनि निंदा नींद बिबाद।
जड़ता उत्कंठा सहित स्वप्न प्रबोध बिषाद ॥१३॥
अपस्मार मति उग्रता त्रास तर्क औ ब्याधि।
उन्माद मरन अवहित्थ है ब्यभिचारी युत आधि ॥१४॥

अथ हाव-लक्षण--(दोहा)

प्रेम राधिका कृष्न को है तातें सिंगार।
ताके भाव प्रभाव तें उपजत हाव बिचार ॥१५॥
हेला लीला ललित मद बिभ्रम बिहृत बिलास।
किलकिंचित बिच्छित्ति कहि अरु बिब्बोक-प्रकास ॥१६॥
मोट्टाइत सुनि कुट्टमित बोधकादि बहु हाव।
अपने अपने बुद्धिबल बरनत कवि कबिराव ॥१७॥

अथ हेला हाव-लक्षण--(दोहा)

पूरन प्रेम-प्रताप तें भूलत लाज-समाज।
सो हेला जिहिं हरत हिय राधा श्रीब्रजराज ॥१८॥

अथ श्रीराधिकाजू को हेला हाव, यथा--(सवैया)

अवलोकनि अंकुस ऐंचि अनूपम भ्रू जुग पास भलें गल मेली।
मृदुहास सुबास उठाइ मिली वह जोन्ह की जामिनि माँझ अकेली।
अधरासव प्याइ किये बस 'केसवराइ' करी रसरीति नवेली।
बन में बृषभानुसुता सुखहीं हरि कों हरि लैं गई हेलहि हेली ॥१९॥

---

[१०] अनन्य-सुवर्ण (नवल०)।
[१४] त्रास-त्राश (नवल०)। उन्माद --अवहित्थ भय आदि दै (रस०)।
[१७] बोधकादि--बोधादिक (नवल०)।
[१९] अधरासव--अधराखस (रस०, नवल०)। रसरीति--रतिरीति (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू को हेला-हाव, यथा– (सवैया)

वेनु सुनाइ बुलाइ लई वन भौन बुलाइ कै भाँति भली को।
फूलि गयो मन फूल्यो बिलोकत 'केसव' कानन रास थली को।
अधरा-रस प्याइ कियो परिरंभन चुंबन कै मुख काम-कली को।
हेलहिं श्रीब्रजनागर आजु हर्यो मन श्रीवृषभानुलली को ॥२०॥

अथ लीला हाव-लक्षण– (दोहा)

करत जहाँ लीलानि कों प्रीतम प्रिया बनाइ।
उपजत लीला हाव तहँ बरनत 'केसवराइ' ॥२१॥

अथ श्रीराधिकाजू को लीला हाव, यथा– (सवैया)

पायन को परिबो अपमान अनेक सों 'केसव' मान मनैबो।
मोठो तमोर खवाइबो खैबो बिसेषि चहूँ दिसि चौंकि चितैबो।
चीर कुचीलनि ऊपर पौढ़िबो पातनि के खरकें भजि ऐबो।
आँखिनि मूदि कै सीखति राधिका कुंजनि तें प्रतिकुंजनि जैबो ॥२२॥

श्रीकृष्णजू को लीला हाव, यथा– (सवैया)

झाँकि झरोखनि में चढ़ि ऊँचे अवासनि ऊपर देखन धावै।
निंदत गोप चरित्रनि कों कहि 'केसव' ध्यान कके गुन गावै।
चित्रित चित्र में आपुनपौ अवलोकत आनँद सों उर लावै।
आँगन तें घर में घर तें फिरि आँगन बासर कों बिरमावै ॥२३॥

अथ ललित हाव-लक्षण– (दोहा)

बोलनि हँसनि बिलोकिबो चलनि मनोहर रूप।
जैसें तैसें बरनियै ललित हाव अनुरूप ॥२४॥

श्रीराधिकाजू को ललित हाव, यथा– (कबित्त)

कोमल बिमल मन, बिमला सी सखी साथ,
कमला ज्यों लीने हाथ कमल सनाल के।
नूपुर की धुनि सुनि भोरें कलहंसनि के,
चौंकि चौंकि परै चारु चेंटुवा मराल के।
कचनि के भार कुच-भारनि सकुच-भार,
लचकि लचकि जात कटि-तट बाल के।
हरें हरें बोलत बिलोकत हँसत हरें,
हरें हरें चलत हरत मन लाल के ॥२५॥

---

[२०] बुलाइ–मुराइ (रस०)। अधरारस०–रूप महामधुपान कराइ कर्यो पररंभन कामकली को (रस०); चुंबन रंभन कामकली को (बाल०)।

[२२] मीठो–पीठो (बाल०; रस०)। भजि–भगि (रस०)।

[२३] बासर–जो निसि (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू को ललित हाव, यथा–(सवैया)

चपला पट, मोर-किरीट लसै मघवा-धनु सोभ बढ़ावत हैं।
मृदु गाजत आवत बेंनु बजावत मित्र मयूर नचावत हैं।
उठि देखि भटू भरि लोचन चातक-चित्त की ताप बुझावत हैं।
घनस्याम घनाघन-वेष धरें जु बने बन तें ब्रज आवत हैं ॥२६॥

अथ मद हाव-लक्षण–(दोहा)

पूरन प्रेम-प्रभाव तें गर्ब बढ़ैं बहु भाव।
तिनके तरुन बिकार तें उपजत है मद हाव ॥२७॥

श्रीराधिकाजू को मद हाव, यथा–(कवित्त)

छबि सों छबीली बृषभानु की कुँवरि आजु,
रही हुती रूपमद मानमद छकि कै।
मारहू तें सुकुमार नंद के कुमार ताहि,
आए री मनावन सयान सब तकि कै।
हँसि हँसि सौंहि करि करि पाइ परि परि,
'केसोराइ' की सौं जब हारे जिय जकि कै।
ताही समै उठे घन घोरि घोरि, दामिनी सी
लागी लौटि स्याम घन उर सों लपकि कै ॥२८॥

श्रीकृष्णजू को मद हाव, यथा–(सवैया)

मनमोहिनी मोहि सकै न सखी चपला चल चित्त बखानत हैं।
रति की रति क्यों हूं न कान करैं दुति-चंदकला घटि जानत हैं।
कहि 'केसव' और की बात कहा रमनीय रमाहूँ न मानत हैं।
बृषभानुसुता हित मत्त मनोहर औरहिं डीठि न आनत हैं ॥२९॥

अथ विभ्रम हाव-लक्षण–(दोहा)

बास बिभूषन प्रेम तें जहाँ होइँ बिपरित।
दरसन-रस तन मन रसित, गनि विभ्रम की गीति ॥३०॥

श्रीराधिकाजू को विभ्रम हाव, यथा–(सवैया)

कटि के तटु हार लपेटि लियो कल किंकिनी लै उर सों उरमाई।
कर नूपुर सों पग पौंची रची अँगियाँ सुधि अंचल की बिसराई।
करि अंजन रंजित चारु कपोल करी जुत जावक नैन-निकाई।
सुनि आवत श्रीब्रजभूषन भूषन भूषतहीं उठि देखन धाई ॥३१॥

---

[२६] प्रेमप्रभाव–प्रेमप्रताप (रस०, बाल० खं०)।
[२९] मन–महि (बाल०, रस०, नवल०)। [३०] बास–बाँकु (नवल०)।
[३१] रची–बनी (रस०); बिना (बाल०)। रंजित–संजित (बाल० रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू को विभ्रम हाव, यथा–(सवैया)

नँदनंदन खेलत हे बने गात बनी छवि चंदन के जल की।
वृषभानसुताहि बिलोकत ही रुचि चित्त में विभ्रम की झलकी।
गिरि जात न जानत पाननि खात बिरी करि पंकज के दल की।
विहँसी सब गोपसुता हरि-लोचन मूँदि सुरोचि दृगंचल की ॥३२॥

अथ विहृत हाव-लक्षण–(दोहा)

बोलनि के समयें बिषें बोलन देइ न लाज।
विहृत हाव तासों कहैं, 'केसव कबि' कबिराज ॥३३॥

अथ राधिका को विहृत हाव, यथा–(सवैया)

मेरे कहे दहिये जु तऊ फिरि ग्रीष्म ज्यों हठ-काठ दहौगी।
पैरिवो प्रेम-समुद्र पराए कराए करें कृत क्यों निवहौगी।
हौंस मरैं सजनी सिगरी कबहूँ हरि सों हंसि बात कहौगी।
पी-चित की चितसारी चढ़ी चित की पुतरी ह्वै कौलौं रहौगी ॥३४॥

श्रीकृष्णजू को विहृत हाव, यथा–(सवैया)

'केसवदास' सों आजु सखी बृषभानु-कुमारी उराहनो दीनो।
गारि दई अरु मारि दई अरबिंदन सों मनु कै हितहीनो।
सीख दई, सुख पाइ लई उर लाइ सुगंध चढ़ाइ नवीनो।
उत्तरु देइ न नंदकुमार कछू सिर नीचे तें ऊँचो न कीनो ॥३५॥

अथ विलास हाव, लक्षण–(दोहा)

खेलत बोलत हँसत अरु चितवत चलत प्रकास।
जल थल 'केसवदास' कहि उपजत बिबिध बिलास ॥३६॥

श्रीराधिकाजू को विलास हाव, यथा–(कवित्त)

किलकत अलिक जु तिलक-चिलक मिस,
भौंहनि में बिभ्रमनि भावभेद दीने हैं।
लोचननि सोचिन सकोचिन नचावति हौ
दसन चमक हीं चकित चित कीने हैं।
'केसोदास' मंद हास अनायास दास करि
लीनें केसोराय जिय जद्यपि प्रबीने हैं।
मोहन के तन मन मोहिबे को मेरी आली,
तेरे मुख सुख हीं अनंत ब्रत लीने हैं ॥३७॥

---

[३४] पैरिवो पौरिवो (वाल० खं०)। करें कृत-किये कित (नवल०)।
[३७] केसोदास०-मंदहास मुखबास अनियास (नवल०)।
[३७] आली-सखी (वाल०); मट्ठ (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू को विलास हाव, यथा–(कवित्त)

जिन न निहारे ते निहोरत निहारिबे कौं,
　　काहू न निहारे जिनि कैसेंहूँ निहारे हैं।
सुर नर नाग नव कन्यनि के प्रानपति,
　　पतिदेवतानि हूँ के हियनि बिहारे हैं।
इहि बिधि 'केसोदास' रावरे असेष अंग,
　　उपमा न उपजी बिरंचि पचि हारे हैं।
रूप-मद-मोचन मदन-मद-मोचन हैं
　　तीय-व्रत-मोचन बिलोचन तिहारे हैं ॥३८॥

अथ किलकिंचित हाव, लक्षण–(दोहा)

श्रम अभिलाष सगर्ब स्मित क्रोध हर्ष भय भाव।
उपजत एकहि बार जहँ तहँ किलकिंचित हाव ॥३९॥

श्रीराधिकाजू को किलकिंचित हाव, यथा–(सवैया)

कौने रसै बिहँसै लखि कौनहिं कापर कोपि के भौंह चढ़ावै।
भूलत लाज भटू कबहूँ कबहूँ मुख अंचल मेलि दुरावै।
कौन की लेति बलाय बलाय ल्यौं, तेरी दसा कहि मोहिं न भावै।
ऐसी तौ तू कबहूँ न भई अब तोहि दई जिनि बाइ लगावै ॥४०॥

श्रीकृष्णजू को किलकिंचित हाव, यथा–(सवैया)

ऐसी है गोकुल के कुल की जिनि दच्छिन नैन किये अनुकूले।
खंजन से मनरंजन 'केसव' हास बिलास लता लगि भूले।
बोलें भुकौ उझकौ अनबोलें फिरौ बिभुके से हिये महि फूले।
रूप भए सबके विष ऐसे ह्वै कान्ह कहौं रस कौन के भूले ॥४१॥

अथ बिब्बोक हाव-लक्षण–(दोहा)

रूप प्रेम के गर्व तें कपट अनादर होइ।
तहँ उपजत बिब्बोक-रस यह जानत सब कोइ ॥४२॥

श्रीराधिकाजू को बिब्बोक हाव, यथा–(सवैया)

आवत जानि कै सोइ रही हरएँ हरि बैठे न जानि जगाई।
साहस कै उरु मध्य धर्‌यो कर जागत रोम की रोंचि जनाई।
नीबी बिमोचत चौंकि उठी पहिचानि भुकी बतियाँ कहि बाई।
बासर गाइ गँवार चरावत आवत हैं निसि सेज पराई ॥४३॥

---

[४१] हास बिलास लता बिहार (का०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्ण को बिब्बोक हाव, यथा–(सवैया)

एक समै इक गोपी सों 'केसव' कैसहुँ हाँसी की बात कही।
जा कहँ तात दई तजि ताहि कहा हमसों रस-रीति नहीं।
सुनि को प्रतिऊतरु देई सखी दृग-आँसुनि की अवली उमही।
उर लाइ लई अकुलाइ तऊ अधिरातक लौं हिलकी न रही ॥४४॥

अथ बिच्छित्ति हाव-लक्षण–(दोहा)

भूषन भूषिबे को जहाँ होइ अनादर आनि।
तहाँ बिछित्ति बिचारिये 'केसवदास' सुजानि ॥४५॥

श्रीराधिकाजू को बिच्छित्ति हाव, यथा–(सवैया)

तन आपनें भाए सिंगार सिंगारत हैं ये सिंगार सिंगारै बृथा हीं।
ब्रजभूषन-नैंननि भूख है जाकी सु तौ पै सिंगार उतारे न जाहीं।
सब होत सुगंधनि हीं तें सुगंध सुगंध तें जाति सुगंध सुभाहीं।
सखि तोहि तें हैं सब भूषन भूषित भूषन तें तुम भूषित नाहीं ॥४६॥

श्रीकृष्णजू को बिच्छित्ति हाव, यथा–(सवैया)

पान न खाए न पाग रची पलटे पट चित्त कहा धरि कै।
कंठसिरी बनमाल मनोहर हार उतारे धरे अरि कै।
चंदन चित्रनि लोपि सलोचन लोक बिलोकनि सों लरि कै।
अंग सुभाइ सुबास प्रकासित लोपिहौ 'केसव' क्यों करि कै ॥४७॥

अथ मोट्टाइत हाव लक्षण–(दोहा)

हेला लीला करि जहाँ प्रकटत सात्विक भाव।
बुधिबल रोकत सोभियै सो मोट्टाइत हाव ॥४८॥

श्रीराधिकाजू को मोट्टाइत हाव, यथा–(सवैया)

खेलत हे हरि बागे बने जहाँ बैठी पिया रति तें अति लोनी।
'केसव' कैसहुँ पीठि में डीठि परी कुच कुंकुम की रुचि रोनी।
मात-समीप दुराई भलें तिनि सातुक भावनि की गति होनी।
धूरि कपूर की पूरि बिलोचन सूँघि सरोरुह ओढ़ि उढ़ोनी ॥४९॥

श्रीकृष्णजू को मोट्टाइत हाव, यथा–(सवैया)

भोजन कै वृषभानु सभा महँ बैठे हे नंद सदा सुखकारी।
गोप घने, बलबीर बिराजत, खात बनाइ बिरी गिरिधारी।

---

[४६] सिंगार०–हैं ए–श्रृंगार नहीं ये–श्रृंगार (नवल०); नहीं ये–नहीं सुगंध (बाल०)।
[४७] रची—बनी (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राधिका झाँकी झरोखनि झाँप सी लागि गिरे मुरझाइ बिहारी।
सोर भयो सकुचे समुझें हरवाइ कह्यो हरि लागी सुपारी ॥५०॥

अथ कुट्टमित हाव-लक्षण–(दोहा)

केलि-कलह में सोभियै केलि कपट पट रूप।
उपजत है तहँ कुट्टमित हाव कहत कबि भूप ॥५१॥

श्रीराधिकाजू को कुट्टमित हाव, यथा–(सवैया)

पहिलें हठि रूठि चली उठि पीठि दै मैं चितई सखि तैंन लखी री।
पुनि धाइ धरें हरिजू की भुजानि तैं छूटिबे कों बहु भाँति झखी री।
गहि कै कुच पीड़न दन्त नखच्छत बैरिनि की मरजाद नखी री।
पुनि ताही को पान खवावति है उलटी कछू प्रीति की रीति सखी री ॥५२॥

श्रीकृष्णजू को कुट्टमित हाव, यथा–(सवैया)

देखतहीं जिहिं मौन गही अरु मौन तजें कटु बोल उचारे।
सौंह कियें हूँ न सौंहों कियों मनुहारि कियें हूँ न सूधें निहारे।
हा हा कै हारि रहे मनमोहन पाइ परें जिनि लातन मारे।
मंडत हैं मुहँ ताही को अंक लै हैं कछू प्रेम के पाठ निन्यारे ॥५३॥

अथ बोधक हाव-लक्षण–(दोहा)

गूढ़ भाव को बोध जहँ 'केसव' औरहि होइ।
तासों बोधक हाव सब, कहत सयाने लोइ ॥५४॥

श्रीराधिकाजू को बोधक हाव, यथा– (सवैया)

बैठी हुती बृषभान-कुमारि सखीनि की मंडली मंडि प्रबीनी।
लै कुँभिलानो सो कंज परी इक पाइनि आई गुवारि नवीनी।
चंदन सों छिरक्यों वह वाकहँ पान दए करुना-रस-भीनी।
चंदन चित्र कपोलनि लोपि कै अंजन आँजि बिदा करि दीनी ॥५५॥

श्रीकृष्ण को बोधक हाव, यथा–(सवैया)

सखि गोकुल गोप-सभा महँ गोबिंद बैठे हुते दुति कों धरि कै।
जनु 'केसव' पूरनचंद लसै चित चारु चकोरनि को हरि कै।
तिनकों उलटो करि आनि दियो किहुँ नीरज नीर नएँ भरि कै।
कहि काहे तें नेंक निहारि मनोहर फेरि दयो कलिका करि कै ॥५६॥

---

[५०] झाँप-झाँकि (रस०) राधिका०–राधिका झाँकि झरोखन ह्वै कवि केशव रीझि गिरे सुविहारी (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

[५६] गोकुल-मोहन (बाल०, रस०, बाल० खं०, नवल०)। चारु–चौर (नवल०)।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दोहा)

राधा राधारमन के कहे यथामति हाव।
ढिठई 'केसवराइ' की छमियो कवि कविराव ॥५७॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारश्रीइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां
राधिकाकृष्णहावभाववर्णनं नाम षष्ठः प्रभावः ॥६॥

७

अथ अष्ट नायिका-वर्णन–(दोहा)

ये सब जितनी नायिका, बरनी मति-अनुसार।
'केसवदास' बखानियै ते सब आठ प्रकार ॥१॥
स्वाधिनपतिका, उत्कहीं, वासकसज्जा नाम।
अभिसंधिता बखानियै और खंडिता बाम ॥२॥
'केसव' प्रोषितप्रेयसी लब्धाविप्र सु आनि।
अष्ट नाइका ये सकल अभिसारिका सुजानि ॥३॥

अथ स्वाधीनपतिका-लक्षण–(दोहा)

'केसव' जाके गुन-बँध्यो सदा रहै पति संग।
स्वाधिनपतिका तासु कों, बरनत प्रेम-प्रसंग ॥४॥

प्रच्छन्न स्वाधीनपतिका, यथा–(सवैया)

'केसव' जीवन जो ब्रज को पुनि जीवहु तें अति बापहि भावै।
जापर देव-अदेव-कुमारिनि वारत माइन बार लगावै।
ता हरि पै तू गँवार की बेटी महावर पाइ भवाँइ दिवावै।
हौं तौ बची अब हाँसिनि हू, ऐसें और जौ देखै तौ ऊतरु आवै ॥५॥

प्रकाश स्वाधीनपतिका, यथा–(कबित्त)

चोली को सो पान तोहि करत सँवारिबोई,
मुकुर ज्यों तोहीं बीच मूरति समानी है।
तोहीं तियदेवता पै पायो पति 'केसोदास',
पतिनी बहुत पतिदेवता बखानी है।
तेरे मनोरथ भागीरथ-रथ पाछै पाछै,
डोलत गुपाल मेरो गंगा को सो पानी है।

---

[५] बिहार-बहार (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी बात कौन जु न मानी सुनि मेरी रानी,
उनकें तौ तेरी बानी वेद की सी बानी है ॥६॥

अथ उत्का-लक्षण–(दोहा)

कौनहुँ हेत न आइयो, प्रीतम जाके धाम।
ताकों सोचति सोच हिय 'केसव' उत्का बाम ॥७॥

प्रच्छन्न उत्का, यथा–(कवित्त)

किधौं गृह काज के न छूटत सखा-समाज,
किधौं कछू आज व्रत-बासर बिभात तैं।
दीनो तैं न सोधु, किधौं काहू सों भयो बिरोधु,
उपज्यो प्रबोधु किधौं उर अवदात तैं।
सुख में न देहु किधौं मोही सों कपट-नेहु
किधौं देखि मेहु अति डरे अधिरात तैं।
किधौं मेरी प्रीति की प्रतीति लेत 'केसोदास'
अजहूँ न आए मन सु धौं कौन बात तैं ॥८॥

प्रकाश उत्का, यथा–(सवैया)

सुधि भूलि गई, भुलए किधौं काहू कि भूलेई डोलत बाट न पाई।
भीत भए किधौं 'केसव' काहू सों, भेंट भई कोऊ भामिनि भाई।
मग आवत हैं किधौं आइ गए, किधौं आवहिं गे सजनी सुखदाई।
अब आए न नंदकुमार बिचारि, सु कौन बिचार अबार लगाई ॥९॥

अथ बासकसज्जा-लक्षण–(दोहा)

बासकसज्जा होइ सो, कहि 'केसव' सबिलास।
चितवै रति गृह द्वार त्यौं पिय-आवनि की आस ॥१०॥

बासकसज्जा, यथा–(कवित्त)

चंदन बिटप बपु कोमल अमल दल,
ललित वलित लता लपटी लवंग की।
'केसोदास' तामें दुरी दीप की सिखा सी दौरि,
दुरवति नील बास दुति अंग अंग की।
पौन पानी पंछी पसु बस सद जित जित
होइ तित तित चौंकि चाहें चोप संग की।
नंदलाल-आगम बिलोकें कुंजजाल बाल,
लीनी गति तेहीं काल पंजर-पतंग की ॥११॥

---

[६] बीच-महँ (काल०)। बेद-देव (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाश वासकसज्जा, यथा–(सवैया)

भाषति है सुख-वैन सखी सहुलास हियें अभिलाषनि जोहै।
कोमल हासनि नैन बिलासनि अंग-सुवासनि कै मन मोहै।
मूरतिवंति किधौं तुलसी तुलसी-बन में, रति-मूरति को है।
कुंज बिराजति गोपबधू कमला जनु कुंजकुटी महिं सोहै ॥१२॥

अथ अभिसंधिता-लक्षण–(दोहा)

मान मनावत हूँ करै, मानद को अपमान।
दूनो दुख तिन बिनु लहै अभिसंधिता बखान ॥१३॥

प्रच्छन्न अभिसंधिता, यथा–(कवित्त)

बार बार बोले जब बोल्यो न बालिस तब,
बालक ज्यों बोलिबे कौं कत बिललातु है।
ज्यों ज्यों परे पाइनि त्यों पाहन तें पीन भयो,
होतु कहा अब कियें माखन सो गातु है।
'केसोदास' सब छाँड़ि कियो हठ ही सों हेत,
बाहु छाड़ि जिय जिये बिनु कहा जातु है।
ऐसे प्यारे पीय ही सों मान्यो न मनायो तब,
ऐसी तोहि बूझियै जु पाछें पछितातु है ॥१४॥

प्रकाश अभिसंधिता, यथा–(सवैया)

पाइ परें हूँ तें प्रीतम त्यौं कहि 'केसव' क्यों हूँ न मैं दग दीनी।
तेरी सखी सिख सीखी न एक हूँ रोष ही की सिख सीखि जु लीनी।
चंदन चंद समीर सरोज जरै दुख देह भई सुख हीनी।
मैं उलटी जु करी बिधि मों कहँ न्यायनि हीं उलटी बिधि कीनी ॥१५॥

अथ खंडिता-लक्षण–(दोहा)

आवन कहि आवै नहीं आवै प्रीतम प्रात।
जाके घर सो खंडिता कहै जु बहु बिधि बात ॥१६॥

प्रच्छन्न खंडिता, यथा–(कबित्त)

आँखिनि जौ सूझत न काननि तौ सुनियत,
'केसोदास' जैसे तुम लोकनि में गाए हौ।
वंस की बिसारो सुधि काक ज्यों चुनत फिरौ,
जूठे सीठे सीथ सठ-ईठ ढीठ ठाए हौ।
दूरि दूरि करत हूँ दौरि दौरि गहौ पाइ,
जानी न कुठौर ठौर जानि जिय पाए हौ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काको घर घालिबे कौं बसे कहाँ घनस्याम,
घूघू ज्यों घुसत प्रात मेरे गृह आए हौ ॥१७॥

प्रकाश खंडिता यथा–(सवैया)

आजु कछू अँखियाँ हरि और सी मानों महावर माहँ रँगी हैं।
मोहन मोही सी लागति मोहिं इतें पर मोहन मोह लगी हैं।
मेरी सौं मोसहूँ मानहुँ वेगि हियें रस-रोष की रीति जगी हैं।
मेरे बियोग के तेज तचीं किधौं 'केसव' काहू के प्रेम पगी हैं ॥१८॥

अथ प्रोषितपतिका-लक्षण–(दोहा)

जाकों प्रीतम दै अवधि, गयो कौन हूँ काज।
ताकों प्रोषितप्रेयसी कहि बरनत कबिराज ॥१९॥

प्रछन्न प्रोषितपतिका, यथा–(सवैया)

'केसव' कैसेहूँ पूरबपुन्य मिल्यो मनभावतो भाग भरयो री।
जानै को माई कहा भयो क्योंहूँ जु औधि को आधिक द्योस टरयो री।
ताकहुँ तू न अजौं हँसि बोलें जऊ मेरो मोहन पाइ परयो री।
काठहू तें हठ तेरो कठोर इतें बिरहानल हू न जरयो री ॥२०॥

प्रकाश प्रोषितपतिका, यथा–(सवैया)

औधि दै आए उहाँ उनसों यह भाजन कै अबहीं हम ऐ हैं।
ताकहँ तौ अब लौं बहराइ कै राखी वरयाइ मरू करि मैं हैं।
बैठे कहा इनके ढिग 'केसव' जाहु नहीं कोउ जाइ जु कै हैं।
जानत हौ उनि आँखिनि तें अँसुवा उमगे बहुरयो पुनि रैहैं ॥ १॥

अथ विप्रलब्धा-लक्षण–(दोहा)

दूती सों संकेत कहि लैन पठाई आप।
लब्धाबिप्र सो जानियै अनआए संताप ॥२२॥

प्रच्छन्न विप्रलब्धा, यथा–(सवैया)

सूल से फूल सुबास कुबास सी भाकसी से भए भौन सभागे।
'केसव' बाग महावन सो जुर सी चढ़ी जोन्ह सबै अँग दागे।
नेह लग्यो उर नाहर सी निसि नाह घरीक कहूँ अनुरागे।
गारी से गीत बिरी बिष सी सिगरेई सिंगार अँगार से लागे ॥२३॥

प्रकाश विप्रलब्धा, यथा–(कवित्त)

देखत उदधिजात देखि देखि निज गात,
चंपक के पात कछू लिख्यो है बनाइ कै।
सकल सुगंध दूरि फूल-माल तोरि डारि,
दूतिका कों मारि पुनि बीरी बगराइ कै।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लै लै दीह साँस तजि बिविध बिलास हास,
'केसोदास' ह्वै उदास चलो अकुलाइ कै।
सेइ कै संकेत सूनो कान्हजू सों बोलि ऊनो,
मोसों कर जोरि दूनो दूनो दुख पाइ कै॥२४॥

अथ अभिसारिका-लक्षण—(दोहा)

हित तें कै मद-मदन तें पिय पै मिलै जु जाइ।
सो कहियै अभिसारिका बरनी त्रिविध बनाइ॥२५॥

अथ स्वकीया अभिसारिका-लक्षण—(दोहा)

अति सलज्ज पग मग धरै चलत वधुन के संग।
स्वकिया को अभिसार यह भूषन भूषित अंग॥२६॥

परकीया अभिसारिका, यथा—(दोहा)

जनी सहेली सोभहीं बंधु बधू-सँग चार।
मग में देइ बराइ डग, लज्जा को अभिसार॥२७॥

प्रच्छन्न प्रेमाभिसारिका, यथा—(कवित्त)

लीनो हम मोल अनबोलें आई जान्यो मोह,
मोहि घनस्याम घनमाला बोलि लाई है।
देख्यो ह्वै है दुख जहाँ देह हू न देखो परै,
देखी कैसें बाट 'केसो' दामिनी दिखाई है।
ऊँचे नीचे बीच-कीच कंटकनि परे पग
साहस-गयंद-गति अति सुखदाई है।
भागी भयकारी निसि निपट अकेली तुम,
नाहीं प्राननाथ साथ प्रेमजू सहाई है॥२८॥

प्रकाश प्रेमाभिसारिका, यथा—(कवित्त)

नैननि की अतुराई बैननि की चतुराई,
गात की गुराई न दुरति दुति चाल की।
आपने चरित्रनि के चित्रत विचित्र चित्र,
चित्रनी ज्यों सोहै साथ पुत्रिका गुवाल की।
चंद्र के समान चारु चाय सों चढ़ाएँ फिरै,
करिकै तिहारे मृग-नैननि की पालकी।

---

[२६] पग०—डगमग भरी (बाल०)। संख्या २६-२७ 'रस०' में नहीं हैं।
[२८] परे-पीड़ (नवल०)। [२६] साथ-संग (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीजे पय-पान अरु खैये पान प्रानप्यारे
आई है जू आई अलबेली ग्वालि कालि की ॥२९॥

प्रच्छन्न गर्वाभिसारिका, यथा—(सवैया)

लाड़िली लीली कलोरी लुरी कहँ लाल लुके कहँ अंग लगाइ कै।
आजु तौ 'केसव' कैसेहुँ लेरुवै लागन देति न देखहु आइ कै।
बेगि चलौ उठि आई लिवावन दौरि अकेलियै हौं अकुलाइ कै।
भूलिहुँ गोकुल गाँउ में गोबिंद कीजै गरूर न गाइ चराइ कै ॥३०॥

प्रकाश गर्वाभिसारिका, यथा—(कवित्त)

चंदन चढ़ाइ चारु अंबर के उर हारु,
सुमन-सिंगार सोहै आनंद के कंद ज्यों।
वारौ कोरि रतिनाथ बीन में बजावै गाथ,
मृगज मराल साथ बानी जगबंद ज्यों।
चौंकि चौंकि चकई सी सौतिन की दूती चलीं
सौतें भईं दीनी अरबिंद-दुति मंद ज्यों।
तिमिर-वियोग भूले लोचन चकोर फूले
आई ब्रजचंद चलि चंदावलि चंद ज्यों ॥३१॥

प्रच्छन्न कामाभिसारिका, यथा—(कवित्त)

उरझत उरग चपत चरननि फन,
देखत बिबिध निसिचर दिसि चारि के।
गनति न लागत मुसल-धार सुनत न
झिल्लीगन-घोष निरघोष जलधारि के।
जानति न भूषन गिरत, पट फाटत न
कंटक अटकि उर उरज उजारि के।
प्रेतनि की पूछें नारि कौन पै तैं सीख्यो यह
जोग कैसो सारु अभिसारु अभिसारिके ॥३२॥

प्रकाश कामाभिसारिका, यथा—(सवैया)

गोप बड़े बड़े बैठे अथाइन 'केसव' कोटि सभा अवगाहीं।
खेलत बालक-जाल गलीन में बाल बिलोकि बिलोकि बिकाहीं।
आवति जाति लुगाईं चहूँ दिसि घूँघट में पहिचानति छाहीं।
चंद सो आननु काढ़ि कहा चलो सूझतु है कछु तोहिं की नाहीं ॥३३॥

---

[२९] चढ़ाएँ फिरै-चढ़ी फिरति (बाल०, नवल०)।
[३०] उठि-चलि (नवल०)। लिवावन-बुलावन (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दोहा)

'केसवदास' सु तीन विधि, बरनी स्वकिया नारि।
परकीया द्वै भाँति पुनि आठ आठ अनुहारि॥३४॥
उत्तम मध्यम अधम अरु तीन तीन विधि जान।
प्रकट तीन सै साठ तिय 'केसवदास' बखान॥३५॥

अथ उत्तमा-लक्षण–(दोहा)

मान करै अपमान तें तजै मान तें मान।
पिय देखें सुख पावई ताहि उत्तमा जान॥३६॥

उत्तमा, यथा–(सवैया)

होइ कहा अब के समुझे न तबै समुझे जब हे समुझाए।
एक ही बंक बिलोकनि माहँ अनेक अमोल बिवेक बिकाए।
जानिपनो न जनावहु जी जनमावधि लौं उहि जानि हौ पाए।
बात बनाइ बनाइ कहा कहौ लेहु मनाइ मनाइ ज्यों आए॥३७॥

अथ मध्यमा-लक्षण–(दोहा)

मान करै लघु दोष तें छोड़ै बहुत प्रनाम।
'केसवदास' बखानियै ताहि मध्यमा बाम॥३८॥

मध्यमा, यथा–(सवैया)

भूलेहूँ सूधें नहीं चितयो इहिं कान्ह कियो लचि लालच केतौ।
हाहा कै हारि रहे मनमोहन पाइ परे त्यों परेई रहे तौ।
हौं तो यहै तब ही की बिचारति होतौ गुमान क्यों याहि धौं एतौ।
लाँबी लटैं अरु पातरी देह जु नैंक बड़ी बिधि आँखि न देतौ॥३९॥

अथ अधमा-लक्षण–(दोहा)

रूठै बारहिं बार जो तूठै बेहीं काज।
ताही सों अधमा सबै कहि बरनत कबिराज॥४०॥

अधमा, यथा–(सवैया)

काटौं कपट्ट जो कान्ह सों कीजै री बांटौं वे बोल कुबोल कसाई।
फारौं सु घूँघट ओट अटै सोई दीठि फोरौ अध कों जु धसाई।
'केसव' ऐसी सखीन कों मारौं सिखै कै करैं हित की जु हँसाई।
बारहि बार को रूसबो बारौं बहाऊँ सु बुद्धि बियोग-बसाई॥४१॥

---

[३८] मनमोहन-पुनि केसव (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दोहा)

इहि बिधि नायक-नायिका बरनहुँ सहित बिबेक।
जाति काल बय भाव तें 'केसव' जानि अनेक ॥४२॥

अथ अगम्या नायिका—(दोहा)

तजि तरुनो संबंध की जानि मित्र द्विजराज।
राखि लेइ दुख भूख तें ताको तिय तें भाज ॥४३॥
अधिक बरन अरु अंग घटि, अंत्यज जन का नारि।
तजि बिधवा अरु पूजिता रमियहु रसिक बिचारि ॥४४॥
यह संजोग सिंगार की 'केसव' बरनो रीति।
बिप्रलंभ सिंगार की रीति कहौं करि प्रोति ॥४५॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायामष्ट
नायिकासंयोगश्रृंगार वर्णनं नाम सप्तमः प्रभावः ॥ ७ ॥

८

अथ विप्रलंभ श्रृंगार लक्षण—(दोहा)

बिछुरत प्रीतम प्रोतमा होत जु रस तिहिं ठौर।
बिप्रलंभ सिंगार कहि बरनत कबि-सिरमौर ॥१॥

अथ विप्रलंभ श्रृंगार-भेद-वर्णन—(दोहा)

बिप्रलंभ सिंगार को चारि प्रकार प्रकास।
प्रथम पूर्व-अनुराग पुनि करुना, मान, प्रबास ॥२॥

अथ पूर्वानुराग लक्षण—(दोहा)

देखतहीं दुति दंपतिहिं उपजि परत अनुराग।
बिन देखें दुख देखियै सो पूरब-अनुराग ॥३॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न पूर्वानुराग, यथा—(कबित्त)

फूल न दिखाव सूल फूलत है हरि बिनु
दूरि करि माल बाल-ब्याल सी लगति है।
चँवर चलाव जिन, बीजन हलाव मति
'केसव' सुगंध बाय बायसा लगति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंदन चढ़ाव जिन ताप सी चढ़ति तन,
कुंकम न लाव अंग आग सी लगति है।
बार बार बरजत बावरी है वारौं आनि
बीरो न खवाव बीर विष सी लगति है।।४।।

श्रीराधिकाजू को प्रकाश पूर्वानुराग, यथा—(सवैया)

'केसव' कैसहुँ ईठनि दीठि ह्वै दीठ परे रति-ईठ कन्हाई।
ता दिन तें मन मेरे कों आनि भई सु भई कहि क्यों हूँ न जाई।
होइगी हाँसी जौ आवै कहूँ कहि जानि हितू हित बूझन आई।
कैसें मिलौंरी मिले बिनु क्यों रहौं नैननि हेत हिये डर माई।।५।।

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न पूर्वानुराग, यथा—(सवैया)

एक समै वृषभान-सुता सजनी-गन में जननी-संग बैसी।
जात उन्हैं चितयो जिहि रीति सुप्रीति हियें कहि जाइ न तैसी।
ता दिन तें जग की जुबतीनि की लागत 'केसव' बात अनैसी।
चाहि फिर्यो चित चक्र चहूँ न कहूँ दुति देखियै वा मुख कैसी।।६।।

श्रीकृष्णजू को प्रकाश पूर्वानुराग, यथा—(सवैया)

भाँति भली वृषभान-लली जब तें अँखियाँ अँखियानि सो जोरी।
भौंह चढ़ाइ कछू डरपाइ बुलाइ लई हँसि कै बस भोरी।
'केसव' काहूँ त्यौं ता दिन तें रुचि कै न बिलोकति केतौ निहोरी।
लीलत है सबहीं के सिंगार अँगारनि ज्यों बिनु चंद चकोरी।।७।।

अथ दश दशा-वर्णन—(दोहा)

अबिलोकनि आलाप तें मिलिवे कौं अकुलाहिं।
होत दसा दस बिनु मिलें 'केसव' क्यों कहि जाहिं।।८।।

दश दशा नाम-कथन—(दोहा)

अभिलाष सु चिंता गुनकथन स्मृति उद्वेग प्रलापु।
उन्माद व्याधि जड़ता भएँ होतु मरन पुनि आपु।।९।।

अथ अभिलाष-लक्षण—(दोहा)

नैन बैन मन मिलि रहें चाहै मिल्यो सरीर।
कहि केसव' अभिलाष यह बरनत हैं कबि धीर।।१०।।

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न अभिलाष, यथा—(सवैया)

सुधि बुद्धि घटी दुति देह मिटी दिन हीं दिन चाहियै बाढ़ति सी।
कछु 'केसव' आपने पेट की पार दुरावति है मुख काढ़ति सी।
बिसर्यो सुख भूख सखी निसि नींद परी चित-चाहन आढ़ति सी।
गिरि गो कछू, गाँठि तें छूटि छबीली सु काहे तें डोलति डाढ़ति सी।।११।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराधिकाजू को प्रकाश अभिलाष, यथा—(सवैया)

जौ कहूँ देखें लगै दिख-साध दिखावत हीं दिन हीं दुख पैहौं।
या ही में 'केसव' देखियै बातन देखिहौं देखि सखी अधिकैहौं।
यों उनकी दुति देखिहौं देह ज्यों आपनो देह न देखन दैहौं।
देखिबे कौ बहरावति मोहिं सु हौंऽब कहा कछु देखि हो लैहौं॥१२॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न अभिलाष, यथा—(सवैया)

पाइ परौं बलि जाऊँ मनोहर आपुन सी न करौ अब ताहू।
देखें अघात नहीं दिन के फिरि बारक धौं अनदेखें हो जाहू।
मोसों कही सु कही अब 'केसव' कैसहूँ कान्ह पत्याव न काहू।
डाढ़हुगे जु कहूँक इती रुचि तातो है नेंक सिराइ धौं खाहू।१३॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश अभिलाष, यथा—(सवैया)

है कोइ माई हितू इनको, यह जाइ कहै किहिं बाइ बहे हैं।
न्याय हीं केसव' गोकुल की कुलटा कुलनारिनि नाउ लहे हैं।
देखि री देखि लगाइ टकी इत सोनो सो घोलि कै चाहि रहे हैं।
को है री को जैसें जानत नाहिंन काल्हि ही वाके सँदेस कहे हैं॥१४॥

अथ चिंता-लक्षण—(दोहा)

कैसें कै मिलियै मिलें, हरि कैसें बस होइ।
यह चिंता चित चेत कै बरनत हैं सब कोइ॥१५॥

श्रीराधिकाजू की प्रच्छन्न चिंता, यथा—(दोहा)

आपुनहीं तन आपनो होत न देखें जाहि।
आपुनहीं तें आपनो क्यों मन करिहै ताहि॥१६॥

श्रीराधिकाजू की प्रकाश चिंता, यथा—(कवित्त)

प्रेम भय भूप रूप सचिव सँकोच सोच,
बिरह-बिनोद पील पेलियत पचि कै।
तरल तुरंग अवलोकनि अनंत गति,
रथ मनोरथ रहैं प्यादे गुन गचि कै।
दुहुँ ओर परो जोर घोर घन 'केसोदास'
होइ जीति कौन की को हारै जिय लचि कै।
देखत तुम्हैं गुपाल तिहि काल उहि बाल,
उर सतरंज की सी बाजी राखी रचि कै॥१७॥

---

[१२] कहूँ—कहो (बाल०); (रस०)। दुति-दुरि (बाल०; नवल०)।
[१४] चाहि—डाहि (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू की प्रच्छन्न चिंता, यथा–(कवित्त)

'केसोदास' सकल सुबास को निवास तन,
कहि कब भृकुटि-बिलास त्रास छोलिहै।
कैसो है सुदिन बड़भागी अनुरागी जिहिं,
मेरो द्दग वाके संग लागि लागि डोलिहै।
ऐसी ह्वै है ईस पुनि आपने कटाछ मृग-
मद घनसार सम मेरे उर ओलिहै।
दीप के समीप पुनि दीपति बिलोकें वह,
चित्र की सी पूतरी सु क्यों हूँ हँसि बोलिहै ॥१८॥

श्रीकृष्णजू की प्रकाश चिंता, यथा–(सवैया)

राधिका की जननी कों जनी कोऊ क्यों हूँ स्वयंवर बात जनावै।
देवकुमार से गोपकुमारनि मान दै दै वृषभान बुलावै।
'केसव' कैसहु बाल भली वह माल सु मेरे हियें पहिरावै।
तोहि सखी समदै संग वाकें सु क्यों यह बात सबै बनि आवै ॥१९॥

अथ गुणकथन-लक्षण–(दोहा)

जहँ गुनगन गनि देह-दुति बरनत बचन बिसेखि।
ताकहँ जानहु गुन-कथन, मनमथ-मथन सु लेखि ॥२०॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न गुणकथन, यथा–(कवित्त)

कीरति सहित नित 'केसव' कुंवर कान्ह,
केवल अकीरति नृपति सोम मानियै।
छुवत चंपक पात कुँभिलात जात तन,
अति हरषत गात हरिजू को जानियै।
कोमल सुबासजुत प्यारे के परम पानि,
कंटक-कलित नाल-नलिन बखानियै।
लोचन बिसाल चारु मदनगुपालजू के,
मदन-सरनि दरसन-रस हानियै ॥२१॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश गुणकथन, यथा–(सवैया)

खंजन हैं मनरंजन 'केसव' रंजन नैन किधौं मति जी की।
मीठी सुधा कि सुधाधर की दुति दंतनि की किधौं दाड़िम ही की।
चंद भलो मुखचंद किधौं सखि सूरति काम कि कान्ह की नीकी।
कोमल पंकज कै पद-पंकज प्रानपियारे कि मूरति पी की ॥२२॥

---

[१८] द्दग–बीर (बाल०); अंग (नवल०)।
[१९] जनावै–चलावै (बाल०)।
[२०] सुबास–सुबाहु (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न गुणकथन, यथा–(सवैया)

जौ कहौं 'केसव' सोम सरोज सुधा सुर भृंगनि देह दहे हैं।
दाड़िम के फल श्रीफल बिद्रुम हाटक कोटिक कष्ट सहे हैं।
कोक कपोत करी अहि केहरि कोकिल कीर कुचील कहे हैं।
अंग अनूपम वा तिय के उनकी उपमा कहँ वेई रहे हैं ॥२३॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश गुणकथन, यथा–(सवैया)

लोचन बीच चुभी रुचि राधे की 'केसव' क्यों हूँ सु जाति न काढ़ी।
मानहुँ मेरें गही अनुरागनि कुंकम-पंक-अलंकृत गाढ़ी।
मेरियै लागि रही तनुता जनु यों दुति नील निचोल की बाढ़ी।
मेरे ही मानों हियें कहँ सूँघति यों अरबिंद दियें मुख ठाढ़ी ॥२४॥

अथ स्मृति-लक्षण–(दोहा)

और कछू न सुहाइ जहँ भूलि जाहिं सब काम।
मन मिलिबे की कामना ताही स्मृति है नाम ॥२५॥

श्रीराधिकाजू की प्रच्छन्न स्मृति, यथा–(सवैया)

बोल्यो सुहाइ न खेल्यो हँस्यो अरु देख्यो सुहाइ न दुःख बढ़्यो सो।
नीकियौ बात सुनें समुझै न मनौं मन काहू के मोह मढ़्यो सो।
'केसव' ढूढ़ति यों उर में मतिमूढ़ भयो गुन गूढ़ पढ़्यो सो।
को करै साज बजावै को बीनहि वाको कछू चित चाक चढ़्यो सो ॥२६॥

श्रीराधिकाजू की प्रकाश स्मृति, यथा–(सवैया)

मेरे मिलाए हीं पै मिलिहौ मनमोहन सों मन मोहि न दीजै।
मौनहि मौन बनै न कछू अब क्यों मन मानद के रस भीजै।
ऐसे हीं 'केसव' कैसें जियै अहो पान न खाहु तौ पान्यौं न पीजै।
जानिहै कोऊ कहा करिहौ तब सोच न एतौ संकोच तौ कीजै ॥२७॥

श्रीकृष्णजू की प्रच्छन्न स्मृति, यथा–(सवैया)

घोरि घनो घनसार घस्यो घनस्याम सु चंदन छ्वै तन तूल्यो।
'केसव' कुंज को कूल चितै प्रतिकूल भयो सुभ फूलनि फूल्यो।
भूले से डोलत बोलतहूँ उत जात कितै मन संभ्रम भूल्यो।
जानति हौं यह काहू कै आजु मनोहर हार हिंडोरनि झूल्यो ॥२८॥

श्रीकृष्णजू की प्रकाश स्मृति, यथा–(सवैया)

बासन वास भए बिष 'केसव' डासन डासन की गति लीनैं।
चंदन चाँदनी त्यौं चित चाहै न चंद्रक चंद चिता-रस-भीनें।

---

[२४] अलंकृत-कलंकित (बाल०)।
[२७] सोच न एतौ-सोचु न तौ हो (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पान न खात न पान करै कछु हास-बिलास बिदा करि दीनें।
ऐसी हैं गोकुल के कुल की जिहि गोकुलनाथ के ये ढंग कीनें ॥२६॥

अथ उद्वेग-लक्षण—(दोहा)

दुखदायक ह्वै जात जहँ सुखदायक अनयास।
सो उद्वेग दसा दुसह जानहु 'केसवदास' ॥३०॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न उद्वेग, यथा—(दोहा)

चंदन हीं विष कंद है 'केसव' राहु इहीं गुन लीलि न लीनों।
कुंभज पावन जानि अपावन धोखें पियो पचि जानि न दीनों।
या सों सुधाधर सेष बिषाधर नाँउ धरचो बिधि दै बुधिहीनों।
सूर सों माई कहा कहियै जनि पापी लै आप बराबर कीनों ॥३१॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश उद्वेग, यथा—(सवैया)

'केसव' कालिह बिलोकि भजी वह, आजु बिलोकें बिना सु मरै जू।
बासर बीस बिसे बिष मींड़ियै राति जुन्हाई की जोति जरै जू।
पालिक तें भुव भूमि तें पालिक आलि करोरि कलालि करै जू।
भूषन देहु कछू ब्रजभूषन दूषन देह को हेरि हरै जू ॥३२॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न उद्वेग, यथा—(सवैया)

मेघनि ज्यों हँसि हंस न हेरत, हंसनि ज्यों घनरूप न पीवैं।
कंजनि ज्यों चित चंदन चाहत चंद ज्यों कंजनि क्यों हूँ न छीवैं।
ताल तें बागनि बाग तें तालनि ताल तमाल की जात न सीवैं।
कैसी हैं 'केसव' वे जुवतीं सुनि ऐसी दसा पिय की पल जीवैं ॥३३॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश उद्वेग, यथा—(सवैया)

सोचि सखी भरि लेति बिलोचन, काँपति देखति फूलें तमालहिं।
भूले से डोलत बोलत नाहिन, बाग गए किधौं तेरे ही तालहिं।
देख्यो जौ चाहति,देखि न आवति ? ऐसे में हौं न दिखैयै री लालहिं।
आजु कहा दिखसाध लगी जब देख्यो सुहाइ कछू न गुपालहिं ॥३४॥

अथ प्रलाप-लक्षण—(दोहा)

भँवत रहै मन भौंर ज्यों है तन मन परताप।
बचन कहै प्रिय पच्छ सों तासों कहत प्रलाप ॥३५॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न प्रलाप,यथा—(सवैया)

खेल न हाँसी न, खोरि अठाउ न, हेतु न बैरु हियो कँपै रोसों।
लेनो न देनो, हलाव भलाव न, नातो न गोतो कहा कहीं तोसों।

[३१] जनि पापी लै यह पापु जु० (बाल०)।
[३२] कलालि-कलाप (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनि दियो दुख में दुख 'केसव' कैसें हँसौं री कहा कहि कोसों।
नैन भरिभरि ग्वालि कहै अरी देख्यो तैं कान्ह कहा कह्यो मोसों ।।३६।।

श्रीराधिकाजू को प्रकाश प्रलाप, यथा–(सवैया)

आलिनि मांझ मिली हुती खेलति, जानै को कान्ह धौं आए कहाँ तैं।
ढीठहिं डीठ पर्यो न कछू सठ ढीठ गही हठि पीठि की घातैं।
गई गड़ि लाजनि हीं हिय हीं तौ उठी जरि 'केसव' कांपनी यातैं।
इती रिस मैं न बची कबहूँ पै रही पचि हौं अँखियान के नातैं ।।३७।।

श्रीकृष्ण को प्रच्छन्न प्रलाप, यथा–(सवैया)

नील निचोल दुराइ कपोल बिलोकति ही करि ओलिक तोही।
जानि परी हँसि बोलति भीतर भाजि गई अवलोकत मोही।
बूझिबे की जक लागी है कान्हहिं 'केसव' कै रुचि रूप लिलोही।
गोरस की सौं बबा की सौं तोहि कि बार लगी कहि मेरी सौं को ही ।।३८।।

श्रीकृष्ण को प्रकाश प्रलाप, यथा–(कबित्त)

मोहन मरीचिका सो हास, घनसार को सो
बास, मुख रूप की सी रेखा अवदात हैं।
'केसोदास' बेनी तौ त्रिबेनी सी बनाइ गुही,
जामें मेरे मनोरथ मुनि से अन्हात हैं।
नेह उरझे से नैन देखिबे कौं बिरुझे से,
बिभ्रुकी-सी भौंहैं उझके से उरजात हैं।
लोचन कमल चारु तिन पर पाइ देति,
तेरे घर आई आजु कहि कैसी बात हैं ।।३९।।

अथ उन्माद-लक्षण–(दोहा)

तरकि उठै पुनि उठि चलै चितै रहै मुँह देखि।
सो उन्माद जनावहीं रोवै हँसै बिसेखि ।।४०।।

श्रीराधिकाजू को प्रकाश उन्माद, यथा–(सवैया)

केसव चौंकति सी चितवै, छतिया धरकै, तरकै तकि छाँहीं।
बूझियै और कहै मुख और सु और की और भई पल माँहीं।

---

[३६] भलावन–भला उत (बाल०)। भरिभरि–भरे भरि (बाल०); नैननि नीर भरे (नवल०)।

[३७] ढीठ–दीठ (रस०)। गई गड़ि०–हौं गड़ि लाजनि ही जु गई पै (बाल०)। यातैं–पातैं (बाल०)।

[३८] निचोल–निबोर (रस०)।

[३९] लोचन कमल०–देवी सी बनाई कौन की है जाई यह तेरे घर आई आजु कह कैसी बात है (रस०; नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डीठि लगी, किधौं बाय लगी, मन भूलि परचो, कै करचो कछु काँहीं।
घूँघट की घट की पट की हरि आजु कछू सुधि राधिकै नाँहीं ॥४१॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न उन्माद, यथा–(ताटंक)

'केसव' सुधि बुधि हरित सु तुम बिनु बिथा अगाध राधिकहि बाढ़ी।
छूटी लट लटकति कटितट लौं चितवति नीठि नीठि करि ठाढ़ी।
तरकति तकि तोरति तिन तरफति अति अपार उपचारनि डाढ़ी।
सकसकाति लै सांस अचेत सु चेतहु प्रेम-प्रेत गहि गाढ़ी ॥४२॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न उन्माद, यथा–(सवैया)

गूढ़ अगूढ़ प्रकासत बातनि लोक अलोक की बात घरी सी।
रोवत हैं, कबहूँ हँसि गावत नाचत लाज की छाड़ि छरी सी।
काहू को सोच संकोच न 'केसव' देखत आवति देह मरी सी।
बाम कि बाय कि काम की बाय कि है हरि की मति काहू हरी सी ॥४३॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश उन्माद, यथा–(कवित्त)

सजल चकित चित चितवत चहूँ दिसि,
चाहि चाहि रहैं मुख, चपल चलत धाइ।
सोचत से मन, मन कंपत, तपत तन,
'केसोदास' रोवत हँसत उठैं गाइ गाइ।
चलहि दिखाऊँ तोहि देखतहीं भयो मोहि,
भयो सु कहन आई तोसों अलि अकुलाइ।
जैसें कछु आँक-बाँक बकत हैं आजु हरि,
तैसें जिन नाउँ मुख काहू को निकसि जाइ ॥४४॥

अथ व्याधि-लक्षण–(दोहा)

अंग बरन बिबरन जहाँ, अति ऊँचे उस्वास।
नैन-नीर परिताप बहु, व्याधि सु 'केसोदास' ॥४५॥

श्रीराधिकाजू की प्रच्छन्न व्याधि, यथा–(सवैया)

बेंनु तज्यो उनि बैन तें बोलौ न बोल बिलोकत बुद्धि भगी है।
वे न सुनें समुझें न तू बातहि प्रेत लग्यो किधौं प्रीति जगी है।
'केसव' वे तुहि तोहि रटैं रट तोहि इतै उनि हीं की लगी है।
वे भखैं पान न, पान्यौं न तू, सु तैं कान्ह ठगे कि तू कान्ह-ठगी है ॥४६॥

---

[४१] चौंकति–चौंकित (रस०)
[४२] हरित०–रहै तुम्हैं बिनु (सरदार)। तरकति०–तरकि तोरति तनु (नवल०)।
[४३] छाड़ि–छाँह (नवल०)। संख्या ४३ 'रस०' में नहीं है।
[४६] बेनु–बैन (नवल०, बाल०)। बोल–नैन (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णजू की प्रकाश व्याधि, यथा–(सवैया)

ह्वाँ उनिके तन ताप तें तापियै, ह्याँ इनके उपचार जुड़ैयै।
ह्वाँ उनिके उड़ि जैयै उसासनि ह्याँ इनिके अँसुवानि अन्हैयै।
'केसव' ये नंदलालन वै वृषभानलली पै निदान न पैयै।
एकहिं बेर दुहूँनि कहा भयो माई री तू चलि, देखन जैयै ॥४७॥

अथ जड़ता-लक्षण–(दोहा)

भूलि जाइ सुधि बुधि जहाँ, सुख दुख होइ समान।
तासों जड़ता कहत हैं 'केसोदास' सुजान ॥४८॥

श्रीराधिकाजू की प्रच्छन्न जड़ता, यथा–(सवैया)

खरे उपचार खरी सियरी सियरे तें खरोई खरो तन छीजै।
ऐसे में और करें तें कछू उपजै तो सकेलि कहा हम लीजै।
देखत हौ यह कामकली कुंभिलानियै जाति कहा अब कीजै।
कौन पै जाऊँ, कहा करौं 'केसव' कैसें जियै वह क्यों हम जीजै ॥४९॥

श्रीराधिकाजू की प्रकाश जड़ता, यथा–(सवैया)

अँखियानि मिली सखियानि मिली पतियां-बतियाँनि मिली तजि मौनैं।
ध्यान-बिधान मिलीं मनहीं मन ज्यों मिलै राँक मनौं मन सौनैं।
'केसव' कैसहुँ बेगि चलो नतु ह्वैहै वहै हरि जो कछु हौनैं।
पूरन प्रेम-समाधि लगे मिलि जैहै तुम्हैं मिलिहौ तब कौनैं ॥५०॥

श्रीकृष्णजू की प्रच्छन्न जड़ता, यथा–(सवैया)

पल ही पल सीतल होत सरीर बिचारे सबै उपचार निदानैं।
जौ करियै तन खंडन मंडन चित्त कछू सुख दुःख न आनैं।
'केसव' कान्ह सुने समुझैं नहिं, बूझियै कौनहिं को पहिचानैं।
जोग लियो कै वियोग है काहू को लोग कहा इनि रोगनि जानैं ॥५१॥

श्रीकृष्णजू की प्रकाश जड़ता, यथा–(सवैया)

कान्ह कें आसन बासनहींन हुतासन मीत को प्रासन कीजै।
'केसव' इंद्रिय सोधि सबै मन साधि समाधिनि के रस भीजै।
जौ लौं भए हरि सिद्ध प्रसिद्ध न तौलौं बिलोकि अलोक न कीजै।
देवी ! करें तप तो लगि वे, बरदान न जौ जिय-दान तौ दीजै ॥५२॥

[४७] देखन जैयै–देखि डरैयै (रस०, नवल०)।
[४९] हौ–ही (बाल०, नवल०)। कामकली–कामलता (नवल०)।
[५०] राँक–एक (नवल०)। नतु–तन (रस०, नवल०, बाल०);
[५१] पहिचानैं–यह मानै (रस०, बाल०, नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ मरण-लक्षण-(दोहा)

बनै न क्योंहूँ मिलन जहँ, छल बल 'केसोदास'।
पूरन प्रेम-प्रताप तें मरन होत अनयास ॥५३॥
मरन सु 'केसवदास' पै बरन्यो जाइ न मित्र।
अजर अमर जस कहि कहौं कैसें प्रेत-चरित्र ॥५४॥
रति उपजै रमनीनि कें, पहिलें 'केसवदास'।
तिन की इंगित देखि सखि करत सु प्रेम-प्रकास ॥५५॥
अति आदर अति लोभ तें, अति संगति तें मित्त।
साधुनि हूँ के होत हैं 'केसव' चंचल चित्त ॥५६॥
सुभग दसा दस मैं कहीं उपजै पूरन राग।
जिहिं बिधि उपजै मान मन बरनौं सुनहु सुभाग ॥५७॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारश्रीइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां
विप्रलंभशृंगारपूर्वानुरागवर्णनं नामाष्टमः प्रभावः ॥८॥

९

अथ मान-लक्षण–(दोहा)

पूरन-प्रेम-प्रताप तें, उपजि परतु अभिमान।
ताकी छबि के छोभ तें, 'केसव' कहियत मान ॥१॥
प्रकटहि पिय प्रति मानिनी, गुरु लघु मध्यम मान।
प्रकटहिं पीय प्रियानि प्रति, 'केसवदास' सुजान ॥२॥

अथ गुरुमान-लक्षण–(दोहा)

आन नारि के चिन्ह लखि, अरु सुनि श्रवननि नाउँ।
उपजत है गुरुमान तहँ, 'केसवदास' सुभाउँ ॥३॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न गुरुमान चिह्नदर्शन तें, यथा–(सवैया)

आजु मिले बृषभानकुमारिहि नंदकुमार बियोग बितै कै।
रूप की रासि रस्यो रस 'केसव' हास बिलासनि रोस रितै कै।

---

[५६] संख्या ५६ के अनंतर 'रस०' में यह दोहा है—
आदरादि तें साध हू ज्यों चंचल चित होत।
त्यों पर सखि सँग दंपतिहिं चंचलता उद्दोत ॥
[२] अरु–कै ([illegible])।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बागे के भीतर देखि हियें नख नैन नवाइ रही सु इतै कै।
फूलिहि में भ्रमि भूलि मनों सकुचे सरसीरुह चंद चितै कै ॥४॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश गुरुमान श्रवण तें, यथा–(सवैया)

बूझति ही वह गोपी गुपालहि आजु कछू हँसि कै गुनगाथहिं।
ऐसे में काहू को नाम सखी कहि कैसें धौं आइ गयो ब्रजनाथहिं।
खात खवावति ही जु बिरी सु रही मुख की मुख हाथ की हाथहिं।
आतुर ह्वै उनि आँखिन तें अँसुवा निकसे अखरानि के साथहिं ॥५॥

अथ नायक को गुरुमान-लक्षण–(दोहा)

लोक-लीक उल्लंघि कछु, प्रिया कहै जब बैन।
उपजि परत गुरुमान तहँ, प्रीतम क उर-ऐन ॥६॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न गुरुमान, यथा–(कवित्त)

ऐसी ऐसी रति राचे सौंहनि के साँचे स्याम,
देखौ आनि बाँचि कैधौं कौन की ये चोठी है।
सुनहु सभाग पाई रावरीयै पाग माँहि,
कागर के रूप काहू आगि की अँगीठी है।
जनति हौं याहीं मग पायो है जनम जग,
औरहू अलोकन की बीथो तुम दीठी है।
काहे कौं कहावत कटुक कालकूट ऐसी,
कह्यो हरि हरें हँसि 'हमकौं तौ मीठी है' ॥७॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश गुरुमान, यथा–(कवित्त)

आपने सो आपनेही आगें कहियत किधौं,
खोरि के खजाने खोरि ही में खोलियत हैं।
डाठि हू तौ रोकियत जौ पै कहूँ आइ 'केसो'
और कहा नैन लै छुरी सों छोलियत हैं।
वेई घनस्याम जिनि बिनु घनी घरनीनि,
घरिक में घने घनसार घोलियत हैं।
बोलति हौ कैसें ऐसें बोलौ जैसें बोलियत,
मोल हू लए सों ऐसे बोल बोलियत हैं ॥८॥

अथ लघुमान-लक्षण–(दोहा)

देखत काहू नारि त्यौं, देखै अपने नैन।
तहँ उपजत लघुमान, कै सुनें सखी के बैन ॥९॥

---

[५] कहि कैसें०–सुनि आय धौं कैसे कह्यो (बाल०)।
[६] औरहू–लोक में (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न लघुमान, यथा–(सवैया)

कान्ह तिहारी वा प्रानप्रिया कें अयान सयान सबै मन माहीं।
मान किधौं अपमान अबै यह मानस पै अनुमाने न जाहीं।
सुख दुख न 'केसव' जानि परै समुझै रिस हास न हाँ अरु नाहीं।
अब यों खिन ही सियरी खिन ताती है ज़्यों बदलै बदरानि की छाहीं ॥१०॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश लघुमान, यथा–(कवित्त)

झूठहूँ न रूठियै री ईठ सों इतै कहाऽब,
नेंक पीठ देत ईठ कौन के भए अली।
काल्हि के तौ नंदलाल मो सों घालि लालि करें,
काल्हि ही न आई ग्वारि जौ पै तू हुती भली।
आजु हीं जु बीच परी बीच पारिबे कौं माई,
आन रंग आन भाँति ज्यों कनेर की कली।
तेरे ही कहे की कोऊ साखि है जू बूझियै री,
देखियै जु आँखि ताकी साखि की कहा चली ॥११॥

अथ प्रिय को लघुमान-लक्षण–(दोहा)

प्रिय को कह्यो करै नहीं प्रिया कौनहूँ काज।
उपजत है लघुमान तहँ बरनत हैं कविराज ॥१२॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश लघुमान, यथा–(सवैया)

आगें कहा करिहौ अबहीं तें इतो दुख दीनो कह्यो बिनु कीनें।
'केसव' कौनहु लाज कि लाड़ तें भूलि गई तौ भए हित हीनें।
भेंटे नहीं भरि अंक लला भरि जीभ न बोली जू बोल नवीनें।
देखे नहीं कबहूँ भरि आँखिनि आजुहिं कैसें चलै चित लीनें ॥१३॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश लघुमान, यथा–(सवैया)

बोलि ज्यों आए त्यों बोलत नाहिनै मोसों कहा कछु चूक तिहारी।
'केसव'कैसहूँ देख्यो सुने बिन जानै कहा कोऊ जी की बिहारी।
खीर सिराइ न जानत खाइ, नई यह भूख को भाँति निहारी।
काँचि ही दाखहि चाहत चाख्यो सु अंत तऊ तुम कुँजबिहारी ॥१४॥

अथ मध्यम मान-लक्षण–(दोहा)

बात कहत पिय और सों देखै 'केसवदास'।
उपजत मध्यम मान तहँ मानिनि के सबिलास ॥१५॥

---

[११] भाँति–जिय (बाल०, नवल०)।
[१२] प्रिया०–प्रिय को नाहीं लाज (नवल०)।
[१५] सबिलास–[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न मध्यम मान, यथा–(सवैया)

कहौ कान्ह कहाँ सिगरी निसि नासी सु तौ तुम हीं कहँ चाहतहीं।
तनु में तनु रेख लिखी किहि 'केसव' कंटक-कानन गाहतहीं।
कछू राति सी आँखि कहा भई तातो तिहारे बियोग के दाहतहीं।
हिय बंचक-रीति रची जब रंचक लाइ लई उर नाह तहीं ॥१६॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश मध्यम मान, यथा–(सवैया)

सखि ज्यों उनको तू बकावति मोहू को आई बकावन ह्वै गरई।
अब याही तें तोसहु बात कछू कहिबे कों हुती न कहो परई।
कहि 'केसव' आपनी जांघ उघारि कै आप ही लाजनि को मरई।
इक तौ सब तें हरए हरि हैं अब होंहुँ कहा हरि तें हरई ॥१७॥

अथ प्रिय को मध्यम मान-लक्षण–(दोहा)

जहाँ न मानै मानिनी, हारै पिय जु मनाइ।
उपजत मध्यम मान तहँ, प्रीतम कें उर आइ ॥१८॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न मध्यम मान, यथा–(कवित्त)

बार बार बरजी मैं सारस सरस मुखी,
आरसी लै देखि मुख या रस में बोरिहै।
सोभा के निहोरें तें निहारति न नेंकहूँ तू,
हारी हैं निहोरि सब कहा काहू खोरि है।
सुख को निहोरयो जु न मान्यो सो भली करी तैं,
'केसोराइ' की सौं अब जौ तू मुहँ मोरिहै।
नाह के निहोरें किन मानति निहोरति हौं,
नेह के निहोरें फिर मोही जु निहोरिहै ॥१९॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश मध्यम मान, यथा–(सवैया)

मानहिं मान तें मानिनि 'केसव' मानस तें कछु मान टरैगो।
मान रहै सु जु मानै नहीं परिमान नखें अभिमान भरैगो।
ह्वैहै सहेली समान तबै जब सौतिनि में अपमान करैगो।
आप मनावत मानहि री बहुरयौ जु मनावन तोहि परैगो ॥२०॥

---

[१६] नासी–नारी (नवल०)।
[१७] परई–घरई (नवल०)।
[१९] या रस–आरस (नवल०, बाल०)। मानति–मानहि निहोरति हौ (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दोहा)

राधा राधा-रवन के बरने मान समान।
तिन को मान मनाइबो कहियत सुनौ सुजान ॥२१॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां
विप्रलंभश्रृंगारमानवर्णनं नाम नवमः प्रभावः ॥९॥

१०

अथ मानमोचन-लक्षण—(दोहा)

मान तजहिं प्रीतम प्रिया, कहि 'केसव' करि प्रीति।
बरनि सुनाऊँ सुनहु सब, मैं जु सुनी षट रीति ॥१॥
साम दान भनि भेद पुनि, प्रनति उपेच्छा मानि।
पुनि प्रसंग-विध्वंस अरु, दंड होइ रस-हानि ॥२॥

अथ साम-लक्षण—(दोहा)

ज्यों क्योंहूँ मन मोहियै छूटि जाइ जहँ मान।
सोई साम उपाय कहि 'केसवदास' बखान ॥३॥

श्रीराधिकाजू को साम उपाय, यथा—(सवैया)

'केसवदास' सदा कियें आस रहै सुख की दुख ताहि न दीजै।
ताहू सों रोष न मानियै मानिनि भूलिहुँ आपनो मानि सु लीजै।
हौं तुमहीं तुम हौं सुनि सुंदरि मूरति द्वै जिय एकहीं जीजै।
मान है भेद को मूल महा अपनें सहु सो सपने हूँ न कीजै ॥४॥

श्रीकृष्णजू को साम उपाय, यथा—(सवैया)

कहि आवति है जो कहावत हौ तुम नाहीं तो ताकि सके हम सोंही।
तिहि पैंड़े कहा चलियै कबहूँ जिहि काँटो लगै पग पीर दुकोंहीं।
प्रीति कुम्हेंड़े की जैहै जई सम, होति तुम्हैं अंगुरी पसरोंहीं।
कीजै कछू यह जानि कै 'केसव' हौं तुम हीं तुम तौ हरि हों हीं ॥५॥

---

[२] दान०—दान अरु (नवल०)।
[३] ज्यों—ज्यौं त्यौं करि (बाल०)। छूटि—भूलि (बाल०)।
[५] दुकोहीं—पिरोहीं (बाल०)। कीजै—को ह्वै (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथ दान उपाय-लक्षण–(दोहा)

'केसव' कौनहुँ ब्याज मिस दै जु छुटावै मान।
बचन-रचन मोहै मनहिं तासों कहियै दान ॥६॥
जहाँ लोभ तें दान लै छाँड़ै मानिनि मान।
बारबधू के लच्छनहिं पावै तथहि प्रमान ॥७॥

श्रीराधिकाजू को दान उपाय, यथा–(कवित्त)

कोमल अमल दल दीने हे कमल-भव,
अरुन अरुन प्रभु जू कौं सुखदाइयै।
'केसोदास' सोभाघर सधर सुधा के धर,
मधुर अधर उपमा तौ इनि पाइयै।
उरज मलय-सैल-सील सम सुनि देखि,
अलक बलित ब्याल आसा उर आइयै।
निपट निगंध यह हार बंधुजीव को सु,
चाहत सुगंध भयो नेंक ग्रीव नाइयै ॥८॥

अन्यच्च, यथा–(सवैया)

मत्तगयंदनि साथ सदा इनि थावर जंगम जंतु बिदार्‌यो।
ता दिन ते कहि 'केसव' बंधन बेधन कै बहुधा बिधि मार्‌यो।
सो अपराध सुधारन सोध यहै इनि साधन साधु बिचार्‌यो।
पावन-पुंज तिहारो हियो यह चाहत है अब हार बिहार्‌यो ॥९॥

श्रीकृष्णजू को दान उपाय, यथा–(कवित्त)

हँसति हँसति आई आनि इक गाथा गाई,
कहहु कन्हाई याको भाउ समझाइ कै।
पीबें क्यों अधर-मधु दंपति सु एकैं बार,
रदन करज थल दीजहिं बताइ कै।
यह परिरंभन कहावै कौन 'केसोदास'
मेरी सौं जो मोसों तुम राखहु दुराइ कै।
राधिका की अधिकाई कहा कहौं लीनो आजु,
आपनो पियारो पीउ आपु ही मनाइ कै ॥१०॥

अथ भेद-लक्षण–(दोहा)

सुख दै कै सब सखिनि कहँ आपु लेइ अपनाइ।
तब सु छुड़ावै मान कों, बरनौं भेद बनाइ ॥११॥

---

[६] मिस–कछु (बाल०, नवल०)। छुटावै–छुड़ावै (बाल० नवल०)।
[७] 'रस०' में नहीं है।
[८] सधर-सुधर (नवल०)। उर आइयै–उर धाइयै (बाल०)।
[११] छुड़ावै–छिड़ावै (रस०); मनावै (बाल०)। मान कों–मानिनी (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराधिकाजू को भेद-उपाय, यथा–(सवैया)

'केसव' धाइ खवासिनि तोहि सखी सकुचैं सब आपन घातैं।
मोहिं तौ माई कहे हीं बनै अब बाँधि दई विधि तो कहँ तातैं।
नेंक हरें हरें बोलि बलाइ ल्यौं हौं डरपौं गड़ि जाहि न जातैं।
माखन सो मेरे मोहन को मन काठ सी तेरी कठेठी ये बातैं ॥१२॥

श्रीकृष्णजू को भेद उपाय, यथा–(सवैया)

काहू कह्यो 'हरि रूठि रहे' तब तें बहु बुद्धि बितर्क बढ़ावै।
सोधि सबै अपनो सो रही धन मीत रहे सु उपाय न पावै।
ह्वाँ वह रीति इहाँ यह 'केसव' ज्यों दुहुँ ओर जरे कों जरावै।
बूझति हौं पिय प्यारी तिहारी सु मान करै कि मनावन आवै ॥१३॥

अथ प्रणति-लक्षण–(दोहा)

अति हित तें अति काम तें, अति अपराधहिं जानि।
पाइ परै प्रीतम प्रिया, ताकों प्रनति बखानि ॥१४॥

श्रीराधिकाजू की प्रेम तें प्रणति, यथा–(सवैया)

तैं चितयो जु न सूधे तऊ जऊ प्रेम ककैं पिय पाउ गह्यो हो।
मोहिं बिलोकि बिलोकि अलीन अलीक अलोक-प्रवाह बह्यो हो।
बूझति हौं सखि सीस दियें तिनु और सबै हिय हेतु रह्यो हो।
कान्हहि आएँ मनावन तोसौं में मान किधौं अपमान कह्यो हो ॥१५॥

श्रीराधिकाजू की अति काम तें प्रणति, यथा–(सवैया)

बोलति नाहि बुलाएँ हुँ बोल कहा लगी मोहिं बकाए हीं मारन।
सो पर्यो पाइनि बूझि सखी सब देति हैं ज्यौं जुवती जिहि कारन।
हठ छाड़ि कै कंठ लगाइ उठाइ कहा लगी ऐंठि अकास निहारन।
कौनें भए नहि द्वै दिन ए दिन तू ही लगी कछु ऊलट पारन ॥१६॥

श्रीराधिकाजू की अति अपराध तें प्रणति, यथा–(सवैया)

'केसवदास' उदास भई दरसाइ दसा दुख-द्यौस भर्यो री।
राति भए अधिरातक हू लौं बिनै बहु बंधुबधूनि कर्यो री।
धाइ रही समुझाइ कछू न सखीनि हूँ के सिखए तें सर्यो री।
काहे तें मान्यो न मानिनि तौ लगि जौ लगि पाइ न पीउ पर्यो री ॥१७॥

---

[१३] जरावै–जुड़ावै (बाल०, नवल०)। बूझति–पूछति (रस०, बाल०)।
[१५] तऊ जऊ–जऊ तऊ (बाल०)। बूझति–पूछति (बाल०, रस०)।
[१६] बोलति नाहिन–बोलति आपु (बाल०, नवल०)। ऐंठि–बैठी (बाल०); भेदि (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दोहा)

पियहिं मनावै पाइ परि, प्रिया परम हित मानि।
नापराध नहि काम तें बरनत ही रसहानि ॥१८॥

श्रीकृष्णजू की प्रणति अति हित तें, यथा–(सवैया)

नीरहिं तौ बिनु मीन सरै अरु मीन तौ नीरहिं के जिय जीजै।
जा बिनु और सुहाइ न 'केसव' ताहि सुहाइ सु तौ सब कीजै।
जा लगि मो पग लागत हे सु लगी पग अंक लगाइ न लीजै।
हौं सिखऊँ अपनें सपनें हूँ तौ आवत लच्छि किवार न दीजै ॥१९॥

अथ उपेक्षा-लक्षण–(दोहा)

मान मुचावन बात तजि कहियै और प्रसंग।
छुटि जात जहँ मान, सो कहत उपेच्छा अंग ॥२०॥

श्रीराधिकाजू की उपेक्षा, यथा–(कवित्त)

चपला न चमकति चमक हथ्यारनि की,
बोलत न मोर बंदी सयन-समाज के।
जहाँ तहाँ गाजत न, बाजत दमामे दीह,
देत न दिखाई दिनमनि लीने लाज के।
चलि चलि चंदमुखी साँवरे सखा पै बेगि,
सोषक जु 'केसोदास' अरि सुख-साज के।
चढ़ि चढ़ि पवन तुरंगनि गगन घन,
चाहत फिरत चंद जोधा तमराज के ॥२१॥

श्रीकृष्णजू की उपेक्षा, यथा–(कबित्त)

'केसोदास' दिन राति केतकी की भावै भांति,
जिय में बसति जाति, नैननि में नलिनी।
माधवी को पीवे मधु सूझत न अंध कहूँ,
सेवती सेवन कही सेई गंधफलिनी।
औरे हौं कहति बात कान्ह काहे को लजात,
ऐसे तौ खिस्याइ सो जु होइ मनमलिनी।
देखौ नहीं प्रानपति निलज अली की गति,
मालती सों मिल्यो चाहै लियें साथ अलिनी ॥२२॥

अथ प्रसंग-विध्वंस-लक्षण–(दोहा)

उपजि परै भय चित्त भ्रम, छूटि जाइ जहँ मान।
सो प्रसंग-विध्वंस कवि, 'केसवदास' बखान ॥२३॥

[२२] भावै-मारै (रस०)। [२३] छूटि-भूलि (बाल०)। कवि-कहि (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीराधिकाजू को प्रसंग-विध्वंस, यथा—(सवैया)

केकी न 'केसव' काम के किंकर बोलत डोलत देत दुहाई।
काम-निसा यह कामिनि कोऊ रिसाइगी तासहु ह्वै है रिसाई।
गाजति नाहिंन मेघघटा यह बाजति डौंड़ी सखी सुखदाई।
भोर भएँ फिरि कीबो अबोलौ सु बोलौ अबै बलि बोलि कन्हाई ॥२४॥

श्रीकृष्णजू को प्रसंग-विध्वंस, यथा—(कवित्त)

कोकनि की कारिका कहति काहू सारिका सों
दुरि दुरि हित चित चौगुनो चढ़ायो है।
सूकि रह्यो सकुचानि वापुरी सुकी तौ, कहि
काहू सों सकै न देह दुखनि डढ़ायो है।
उठि चलौ न्याउ कीजै अबकें मनाइ दीजै,
नीकें ही में 'केसोदास' कलह बढ़ायो है।
मानत न एते पर उलटी मनावे वह,
ऐसो ही सयान स्याम सुकहि पढ़ायो है ॥२५॥

(दोहा)

देस काल बुधि बचन तें कल धुनि कोमल गान।
सोभा सुभ सौगंध तें, सुख ही छूटत मान ॥२६॥

यथा—(कवित्त)

घननि की घोर सुनि, मोरनि को सोर सुनि,
सुनि सुनि 'केसव' अलाप अलीजन को।
दामिनी दमक देखि देह की दिपति देखि,
देखि सुभ-सेज देखि सदन सु बन को।
कुंकम की बास घनसार की सुबास भयो,
फूलनि को बास, मन फूलि कै मिलन को।
हँसि हँसि बोले दोऊ, अनहीं मनाएँ मान
छूटि गयो एकै बार राधिकारमन को ॥२७॥

(दोहा)

इहि विधि मान छुड़ावहीं, आपुस में नर नारि।
पल पल प्रीति बढ़ावहीं, 'केसवदास' बिचारि ॥२८॥
प्रिया न प्रीतम सों करे, अति हठ 'केसवदास'।
बहुरयौ हाथ न आवई, जौ ह्वै जाइ उदास ॥२९॥

---

[२५] चढ़ायो–बढ़ायो (रस०)। सूकि–सौचि (बाल०)। डढ़ायौ–वढ़ायौ (बाल०); उठायौ (नवल०)। नीकें ही–नेकही (बाल०, नवल०)।
[२७] सदन–सुंदर (नवल०)। गयो०–गो एकहि (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारहिं बार न कीजई, बारक कीजै मान।
कहि 'केसव' ज्यों आप में, सदा बढ़ै सनमान ॥३०॥
प्रीति बिना भय होय नहिं, भय बिनु होइ न प्रीति।
प्रीति रहे जहँ भय रहै, यहै मान की रीति ॥३१॥
गर्ब, व्यसन, धनत्याग तें, निष्ठुर बचन प्रबास।
लालच बिप्रियकरन तें, प्रिय तें होइ उदास ॥३२॥
मान बिबिध करने बिबुध, जहाँ बिबिध बुधिबास।
'केसव' करुना करि कछू कहियत बिरह-प्रबास ।३३॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतसिंहविरचितायां रसिकप्रियायां
विप्रलंभश्रृंगारमानमोचनं नाम दशमः प्रभावः ॥१०॥

११

अथ करुणा-विरह-लक्षण–(दोहा)

छूटि जात 'केसव' जहाँ सुख के सबै उपाय।
करुना रस उपजत तहाँ, आपुन तें अकुलाय ॥१॥
सुख में दुख क्यों बरनियै, यह बरनत व्यौहार।
तदपि प्रसंगहि पाय कछु, बरनत मति-अनुसार ॥२॥

अथ राधिकाजू को प्रच्छन्न करुणा-विरह, यथा–(सवैया)

मैं पठई मति लेन सखी सु रही मिलि कै मिलिबे कहँ आनै।
जाइ मिलें दिन ही दृग-दूत दयाल सो देह-दसा न बखानै।
प्रेरत पैज कियें तन प्राननि जोग के और प्रयोग निदानै।
लाज तें बोलत पाऊँ न 'केसव' ऐसें ही कोऊ कहा दुख जानै ॥३॥

श्रीराधिकाजू को प्रकाश करुणा-विरह, यथा–(कवित्त)

हरित हरित हार हेरत हियो हरत,
हारी हौं हरिननैनी हरि न कहूँ लहौं।

---

[३२] करन तें–करन तिय (बाल०, रस०)।
[३] निदानै–निधानै (रस०), निधानै (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनमाली ब्रज पर बरषत बनमाली,
बनमाली दूरि दुख 'केसव' कैसें सहौं।
हृदय-कमल नैन देखि कै कमलनैन,
होहुगी कमलनैनि और हौं कहा कहौं।
आप घने घनस्याम घनहीं से होत घन,
सावन के द्यौस घनस्याम विनु क्यों रहौं ॥४॥

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न करुणा विरह, यथा-(कवित्त)

जैसें मिल्यो प्रथम श्रवन-मग जाइ मन,
रवन भवन कीने अलिक अलक में।
मनु मिलें मिले नैन 'केसोदास' सबिलास,
छबि-आस भूलि रहे कपोल-फलक में।
नैन मिलें मिल्यो ज्ञान सकल सयान सजि,
तजि अभिमान भूल्यो तन की झलक में।
तैसें छल बल साधि राधिकै मिलन कहँ,
चाहत कियो पयान प्रानहूँ पलक में ॥५॥

श्रीकृष्णजू को प्रकाश विरह, यथा-(सवैया)

है तरुनाई तरंगिनि-पूर अपूरब पूरब राग रँगे पय।
'केसवदास' जिहाज मनोरथ संभ्रम विभ्रम भूरि भरे भय।
तर्क-तरंग-तरंगित तुंग तिमिंगिल सूल बिसालनि के चय।
कान्ह कछू करुनामय हे सखि तैं ही किये करुना-वरुनालय ॥६॥

अथ प्रवास विरह-लक्षण-(दोहा)

'केसव' कौनहु काज तें पिय परदेसहिं जाइ।
तासों कहत प्रवास सब कबि कोबिद समुझाइ ॥७॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न प्रवास विरह, यथा-(सवैया)

तू करिहै कब धौं कहि गौनहि नंदकुमार तौ गौन कियौई।
मोहि महा डरु तो उर को न रहैं लटि लै जिनि कोधौं लियौई।

[४] सावन-स्यामनि (बाल०, रस०)।
[५] जैसे-ऐसे (नवल०)।
[७] 'बाल०' में संख्या ७ के अनंतर यह छंद अधिक है—
जानै कहा मेरी दीरघ साँस लै नैन नवाइ दुकाइ वृथाहू।
माथौ न दूखिहै सूधो निहारौ पखारो नहीं मुखु जौ न अन्हाहू।
ऐसैं ही 'केसव' क्यों रहे प्रान सु आपनी पीर सुनावहु काहू।
कै हुती भोरी कि भोजनौ छाड़चो तौ पान्यौ न पीबौ जौ पान न खाहू ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी न बूझियै 'केसव' तोहि बिचारै जु बीच बिचार बियौई।
तेरे ही जीय जियै जिनको जिय रे जिय ! ता बिनु तूऽब जियौई ।।८।।

श्रीराधिकाजू को प्रकाश प्रवास विरह-वर्णन, यथा–(कवित्त)

कौन कें न प्रीति, को न प्रीतमहि बिछुरत,
या ही कें अनोखो पतिब्रत गाइयतु है।
'केसोदास' जतन कियें ही भलें आवै हाथ,
और कहा पच्छिनि के पाछें धाइयतु है।
उठि चलि जौ न मानै काहू की बलाइ जानै,
मानसै जु पहिचानै ताकें आइयतु है।
याकें तौ है आजु हीं मिलौं कि मरि जाऊँ ऐसें,
आगि लागें मेरी माई मेह पाइयतु है ।।९।।

श्रीराधिकाजू को विरह-भय-विभ्रम, यथा–(सवैया)

कोकिल केकी कुलाहल हूलि उठी उर में मति की गति लूली।
'केसव' सीत सुगंध समीर गयो उड़ि धीरज ज्यों तन तूली।
जै मुनि जै मुनि कै बची जोन्ह की जामिनी पै न अजौं सुधि भूली।
क्यों जियौ कैसी करौ बहुर्यौ विसु सी बिसनी बिसवासिनि फूली ।।१०।।

श्रीकृष्णजू को प्रच्छन्न प्रवास-बिरह, यथा–(सवैया)

जिनि बोलि सुबोल अमोल सबै अँग केलि-कलोलनि मोल लिये।
जिनिको चित लालची लोचन रूप अनूप पियूष सु पीय जिये।
जिनिके पद 'केसव' पानि छियें सुख मानि सबै दुख दूरि किये।
तिनको सँग छूटत हीं फिटु रे फटि कोटिक टूक भयो न हिये ।।११।।

श्रीकृष्णजू को विरह प्रकाश प्रवास, यथा–(सवैया)

'केसव' क्यों हूँ चले चलि कोरि सँदेस कहैं फिरि पैंड़क दू पर।
आगें धरैं अपनो सो कै साहस पाछें हीं पेलि परै पग भू पर।
होत जहीं तहीं ठाढ़े ठगे से 'चलौ' न कह्यो परै कान्ह हितू पर।
लोक की लाज फिर्यो न परै, पै मिलान करैं अधकोसक ऊपर ।।१२।।

श्रीकृष्णजू को विरह-भय-विभ्रम, यथा–(सवैया)

प्रेत की नारि ज्यों तारे अनेक चढ़ाइ चलै चितवै चहुँघा तो।
कोढ़िनि सी ककुरे कर-कंजनि 'केसव' सेत सबै तन तातो।

---

[८] कब–कहि (बाल०)।
[९] कियें ही–करें ही (नवल०)। मानसैं–मानुसै (बाल०)।
[११] छियें–छवै (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेटत हीं बरहीं अबहो तो बरयाइ गई ही सुखै सुख सातो।
कैसी करौं कहि कैसें बचौं वहुरयौ निसि आई कियें मुँह रातो ॥१३॥

श्रीराधिकाजू की निद्रा, यथा—(सवैया)

आएँ तें आवैगी आँखिनि आगें ही डोलिहै मानहु मोल लई है।
सोवै न सोवन देइ न यों तब सोवन में उन साथ दई है।
मेरियै भूलि कहा कहौं 'केसव' सौत कहूँ तें सहेली भई है।
स्वारथ ही हितु है सबकैं परदेस गएँ हरि नींदौ गई है ॥१४॥

श्रीकृष्णजू की निद्रा, यथा—(सवैया)

'केसव' कैसहुँ कोरि उपाइन आनि सु तो उर लागति है।
चकचौंधत सो चितवै चित में चित सोवत हू महँ जागति है।
परदेस प्रिया पल मोहिं पत्याति न जानै को याकी कहा गति है।
तजि नैननि नींद नवोढ़ बधू लहुँ आधिक राति तें भागति है ॥१५॥

श्रीराधिकाजू की सखी की पत्री, यथा—(सवैया)

'केसव' कुँवरि ! वृषभान की कुँवरि आजु
देवता ज्यों बन उपवन बिहरति है।
कमला ज्यों थिर न रहति कहूँ एक छिन
कमलाग्रजा ज्यों कमलनि तें डरति है।
कली ज्यों न केतकी के फूल रुचैं, सीता जू ज्यों
निसिचर-मुख तिन देखें ही जरति है।
बदन उघारत ही मदन सुयोधन हीं
द्रौपदी ज्यौं नाम मुख तेरो ही करति है ॥१६॥

पुनर्यथा—(कवित्त)

भौंरिनी ज्यों भवत रहति बन-बीथिकानि,
हंसिनी ज्यों मृदुल मृनालिका बहति है।
पीउ पीउ रटति रहति चित चातकी ज्यों,
चंद चितै चकई ज्यों चुप ह्वै रहति है।

---

[१२] 'बाल०' में छंदसंख्या १२ के बाद यह दोहा अधिक है—
खान पान परिधानु पुनि जान जान दुति अंग।
सुम संजोग वियोगु बिनु मानौ सुख तिअ भंग ॥

[१४] मेरियै—मेरि सौं (बाल०)।

[१६] आजु—बन (नवल०, बाल०) छिन—ठौर (नवल०)। डरति—दुरति (रस०)।
रुचैं—छूवै (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिनी ज्यों हेरति न केसरि के काननहिं
केका सुनि व्याली ज्यों बिलान हीं चहति है।
'केसव' कुँवर कान्ह विरह तिहारे ऐसी,
सूरति न राधिका की मूरति गहति है ॥१७॥

श्रीकृष्णजू की सखी की पत्री, यथा—(कवित्त)

दीरघ दरीनि बसैं 'केसोदास' केसरी ज्यों
केसरी को देखि बन करी ज्यों कपत हैं।
बासर की संपदा उलूक ज्यों न चितवत
चकवा ज्यों चंद चितै चौगुनो चपत हैं।
केका सुनि ब्याल ज्यों बिलात जात घनस्याम,
घननि की घोरनि जवासे ज्यों तपत हैं ॥१८॥
भौंर ज्यों भँवत बन जोगी ज्यों जगत रैनि
साकत ज्यों स्याम नाम तेरोई जपत हैं।

(दोहा)

'केसवदास' प्रबास को कह्यो जथामति साज।
राधा हरि बाधाहरन बरनौं सखी-समाज ॥१९॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां संभोगश्रृंगारप्रवासवर्णनं नामैकादशः प्रभावः ॥११॥

१२

अथ सखी-वर्णन—(दोहा)

धाइ, जनी, नाइन, नटी प्रगट परोसिनि नारि।
मालिनि बरइनि सिल्पिनी चुरिहेरनी सुनारि ॥१॥
रामजनी संन्यासिनी पटु पटुवा की बाल।
'केसव' नायक-नायिका सखी करहिं सब काल ॥२॥

धाइ को वचन राधिका सों, यथा—(सवैया)

मोहन-साथ कहा निसि द्यौस रहै सतरंजहि के मिस बैठी।
'केसव' क्योंहूँ सुनै महितारी तौ राखहि री ! घर ही मह पैठी।

---

[१७] वहति—चहति (नवल०) ।
[१८] साकत-चातक (नवल०) ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हौं सिखऊँ सुखदैं सिख तोहि तैं भौंह चढ़ाइ के डीठि अनेठी।
को न लड़ैती सरूप न काहि तुहीं बढ़ू जाति अकासहिं ऐंठी ॥३॥

धाइ को वचन कृष्ण सों, यथा– (कवित्त)

थोरी सी सुदेस बैस दीरघ नयन केप,
गौरा जू सी गोरी भोरी भवजू की सारी सी।
साँचे की सी ढारी अति सूछम सुढार कटि,
'केसोदास' अंग अंग भाइ कै उतारी सी।
सौंधे कैसी सोंधा, देह सुधा सों सुधारी, पाइ
धारी देवलोक तें कि सिंधु तें उधारी सी।
आजु यासों हँसि खेलि बोलि चालि लेहु लाल
काल्हि ऐसी ग्वालि लाऊँ काम की कुमारी सी ॥४॥

जनी को वचन राधिका सों, यथा– (कवित्त)

सोभा को सघन बन मेरो घनस्याम नित,
नई नई रुचि तन हेरत हिराइयै।
'केसोदास' सकल सुबास को निवास करि
बिबिध बिलास हास त्रास बिसराइयै।
ऊख-रस केतक महूख-रस सीठो है
पियूष हू की पैली घाँ है जाको नियराइयै।
चोरीचोराँ नैननि चुराएँ सुख कौन जौ लौं
पिय-मन माँहि मन मेलि न चराइयै ॥५॥

जनी को वचन श्रीकृष्ण सों, यथा– (कवित्त)

ऐसी बातैं ऐसें ही धौं कैसें कै कहौ परनि,
जाकी मति-गति लाज-पट सों लपेटी हैं।
मेरें ही न आवै, मेरी बीर एती बेर वे तौ
जानति हौं धाइ ही के साथ लोटि लेटी हैं।
ऐसी तौ हैं चेरिन की चेरी वाकी 'केसोदास'
जैसी तुम हा हा करि पाइ परि भेटी हैं।
जानति हौं नंदजू के ढोटा हौ जू, जानें बोल
उतहिं वेऊ तौ बृषभानजू की बेटी हैं ॥६॥

---

[३] सुखदै–सिखदै (नवल०, बाल०)। अनेठी–अमेठी (रस०)।
[४] सुढार–सुधारि (रस०, नवल०)। कटि–कढ़ी (नवल०)।
[६] पट–पाट (बाल०, रस०)। जानति हौं०–जात धाइ ही के घर साथ लौटि लेटी है (नवल०)। ढोटा–बेटा (बाल०)। बोल–जाहु (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाइनि को वचन राधिका सों, यथा–(सवैया)

अब ही तौ गए उठि पौरहूँ लौं न पै बोलन जाहि री पींछहि लागें।
करिहौ तब कैसी पराए जु ढोटहि ह्वै है कछू निसिद्यौस के जागें।
जौ न रह्यौ परै 'केसव' कैसहुँ देखतही सुख स्याम सभागें।
देती हौ जान क्यों राखत काहे न आरसीयै करि आंखिन आगें ॥७॥

नाइन को वचन कृष्ण सों, यथा–(सवैया)

बड़ी जिय लाज बड़ो उर आली बड़ी लहुरीयौ चलैं चित लीनें।
बड़ी बड़ी आँखि, बड़ी छबि सों चितवै बड़ि बेर बड़ो सुख दीनें।
बडे ही बिचार बड़ी रुचि 'केसव' क्यों हूँ मिलै तौ मिलै हमहीनें।
बड़ीनि हूँ सों तौ बड़े दुख बोलै, इतै बड़े मान बड़ो मन कोनें ॥८॥

नटी को वचन राधिका सों, यथा–(सवैया)

जौ हौं दिखावन तोहि गई रो तैं मेरियै ग्रीवँ गही फिरि माई।
आजु कहा दिखसाध लगी है दिखाऊँगी जाइ तौ वेई कन्हाई।
देखे तें सीरी ह्वै जाति भटू अनदेखें जरै तु यहै अधिकाई।
राति की वे गति द्यौस की ए अब हौं तेरी बातनि बाजहि आई ॥९॥

नटी को वचन कृष्ण सों, यथा–(कवित्त)

जहीं जहीं दुरै तहीं जोन्ह ऐसी जगमगै
कैसें हूँ जु 'केसव' दुराऊँ लियें रंग की।
पवन के पंथ अलि, अलिनि के पीछैं आली,
अलिनो ज्यों लागी फिरैं जिन्हैं साध संग की।
निपट अमिल वह तुम्हैं मिलिबें की जक,
कैसें कै मिलाऊँ गति मोपै न बिहंग की।
इक तौ दुसह दुख देति हुती दुति दूजें,
बीस बिसे बिसु भई बास वाके अंग की ॥१०॥

परोसिन को वचन राधिका सों, यथा–(सवैया)

पाइ परें पलिका परस्यो सु लगी रति तोलन मेलि रती हो।
सौहैं कियें मुँह सौंहों कियो अब लौं तुम पै गति ऐसी न ती हो।

---

[७] उठि–पुनि (बाल०, नवल०)। सुख–मुख (बाल०)।
[८] तौ मिलै–जौ कहू (बाल०); सु बड़ी (नवल०)।
[९] ए अब–वे गति (रस०); ए पुन (नवल०)। बातनि–बालनि (नवल०)। बाजहि–बाजिनि (नवल०)।
[१०] लियें–लाएँ (नवल०)। बिसु भई बास–बिसु बास भई (बाल०, नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'केसव' कैसहुँ देखन कों तिन्हैं भोरहीं भोरी ह्वै आनि दती हो।
पान खवावत हीं तिन सों तुम राति कहा सतराति हती हो ॥११॥

परोसिन को वचन कृष्ण सों, यथा–(सवैया)

हाँसी में बातक वासों कही हँसि वे हूँ कही सु हितै करि लेख्यो।
आँखैं मिली न मिली सखियाँ पिलबोई सु 'केसव' क्यों अवरेख्यो।
चिचयाइ मरै चुप साधे कि चातक स्वाति समें ही सवै सु बिसेख्यो।
आजु हीं क्यों वह आवै इहाँ जिनि अगि लगेंहूँ न आँगन देख्यो ॥१२॥

मालिन को वचन राधिका सों, यथा–(कबित्त)

दुरिहै क्यों भूषन बसन दुति जोबन की
देह ही की जोति होति द्यौस ऐसी राति है।
नाह को सुबास लागें ह्वैहै कैसो 'केसव'
सुभाव ही की बास भौंर भीर फारे खाति है।
देखि तेरी सूरति की मूरति बिसूरति हौं
लालन को दृग देखिबे कों ललचाति है।
चलिहै क्यों चंदमुखी कुचनि के भार भएँ
कचनि के भार तौ लचकि लंक जाति है ॥१३॥

मालिन को वचन श्रीकृष्ण सों, यथा–(कबित्त)

घेरौ जिनि मोहि घर जान देहु घनस्याम,
घरिक में लागी उर देखिबी ज्यों दामिनी।
ह्वोइ कोऊ ऐसी वैसी आवै इत उत ह्वै कै
वह वृषभानजू की बेटी गजगामिनी।
आदित को आयो अंत, आवौ बलि बलि जाउँ
आवती हैं वेऊ बना आई बनि जामिनी।
काम के डरनि तुम कुंज गह्यो 'केसोदास'
भौंरन के भय उन मौन गह्यो भामिनी ॥१४॥

बरइनि को वचन राधिका सों, यथा–(कबित्त)

मैन ऐसो मन मृदु मृदुल मृनालिका के
सूत ऐसे सुर धुनि मनहि हरति हैं।
दार्यो कैसे बीज दाँत, पात से अरुन ओठ
'केसोदास' देखि दृग आनंद भरति हैं।

---

[१२] सवै-स्रवै (रस०)।
[१३] सुभाव-सुवास (नवल०)।
[१४] बनि जामिनी-अरु जामिनी (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एरी मेरी तेरी मोहि भावति भलाई तातें
बूझति हौं तोहि और बूझत डरति हैं।
माखन सी जीभ, मुख कंज सो कोवँर कहु
काठ सी कठेठी बातें कैसें निकरति हैं ॥१५॥

बरइनि को वचन कृष्ण सों, यथा—(कबित्त)

नैननि नवावौ नेक अति ही अनीति करें
जानत न तुम जैसे व्रज जानियत हैं।
चंचल चरित्र चित चेटक चटकि लावौ
चेरे कै चितनि अभिसार सौंपियत हैं।
एकनि के पैठे उर उररि उरोजन में
उर डोलें 'केसोदास' कैसें वै जियत हैं।
ऐसी कहूँ होति है जो बालनि के चोरि चोरि
मन मनमथ ही के हाथ वेचियत हैं ॥१६॥

शिल्पिनी को वचन राधिका सों, यथा—(सवैया)

अवहीं पुनि बोलि री बोलि, लगी जक पौरिहूँलौं उठि जान न दीने।
मेरे ही जान भई उलटी तुमहीं बस 'केसव' वे कहँ कीने।
जौ तौ इतौ दुख पावति हौ तलफैं दृग मीन मनों जल भीने।
तौ कत छाड़ति हौ छिन एक रहौ किनि चित्र ज्यों हाथहिं लीने ॥१७॥

शिल्पिनी को वचन कृष्ण सों, यथा—(सवैया)

खोट तुरी जिमि खूँट रहौ गहि ठौर कुठौरनि जानिहू जाहू।
लाज न आवति मारें समाजन लागें अलोक के ताजन ताहू।
कोरि बिचार बिचारहु 'केसव' देखहु बूझि हितू सब काहू।
नेह ही के फिरि लागिहौ संग न नैननि क संग ओर निबाहू ॥१८॥

चुरिहारिन को वचन राधिका सों, यथा—(कवित्त)

मन मन मिलें कहा मिलिहै मिले को सुख,
मिलिहू धौं देखहु बोलाइ काहू बाल सों।

---

[१५] ऐसो-कैसे (बाल०, रस०)। तातें-यातें (रस०)। कोवँर-कोमल (रस०)।
[१६] चेटक०-चेटकी चेटका जायो (नवल०)। चेरे कै-चोरिकै (नवल०)। उररि-उरझि (बाल०)। वे जियतु हैं-ति जियतु है (बाल०)। ही के-चाक (बाल०)।
[१७] उलटी तुमही बस-उलटी बस (नवल०)। वे कहँ कीने-हैं कहिबे कह कीने (नवल०)। पावत्ति-देखति (रस०)। भीने-हीने (रस०, नवल०)।
[१८] खोट-खाट (बाल०)। लाज-लाल (नवल०)। समाजन-सभाजन (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूलि परे भौंहनि ही बाँधिहौ कितेक दिन,
बाँधौ वलि जाउँ बनमाली बनमाल सों।
मुहुँ मोरें मारें न मरति रिस 'केसोदास'
मारहु धौं मेरे कहें कमल सनाल सों।
नैननि ही विहसि बिहसि की लौं बोलिहो जू,
कबहूँ तौ बोलिये बिहसि मुख लाल सों॥१९॥

चुरिहेरिन को वचन कृष्ण सों, यथा—(सवैया)

आपु न हूजे दुखी दुख जाके सु ताहि कहा कबहूँ दुख दीजे।
जा बिन और सुहाइ न 'केसव' ताहि सुहाइ सु तौ सब कीजे।
भाग बड़े जु रची तुम सों वह तौ बिभ्ककाइ कहौ कह लीजे।
जौ रिस जाइ तौ जैयै मनावन, तातो है दूध सिराइ तौ पीजे॥२०॥

सुनारिन को वचन राधिका सों, यथा—(सवैया)

लोल अमोल कटाछ कलोल अलोलिक सों पट ओलि कै फेरे।
पानिप सों अति पैने रसाल विसाल बने मनभावते मेरे।
'केसव' चीकने चौगुने चोखे चितै कै भए हरि न्यायनि चेरे।
सोच सकोचन श्रीरति-रोचन धीरज-मोचन लोचन तेरे॥२१॥

सुनारिन को वचन कृष्ण सों, यथा—(कवित्त)

हाँसी में हँसे तें हरि हरे कै भ्रुकति मन-
हारि कै हँसति, हेरि हियें अनुरागी है।
प्रेम की पहेली गूढ़ जानत जनावतहीं
आजु अधरातक लौं मेरे संग जागी है।
अब लौं ज्यों धरी धीर तैसें दिन द्वैक और
धरौ, गिरिधर तुम तें को बड़भागी है।
भावती तिहारी वह काल्हि ही तें 'केसोराइ'
काम की कथानि कछू कान देन लागी है॥२२॥

रामजनी को वचन राधिका सों, यथा—(कवित्त)

कोमल कमल वे तौ अमल ये तिक्ष चल,
मलिन नलिन नवनील के से पात हैं।
सूधे साधु सुद्ध वे तौ कुटिल प्रसिद्ध ये तौ
'केसव' परम चोर परम किरात हैं।

---

[१९] मन-नाम (नवल०)। केसोदास-प्यारे लाल (बाल०)।
[२०] बिभ्ककाइ-बिरचाइ (बाल०, रस०)।
[२२] हँसे तें-भ्रुकें तें (रस०)। हरे कै-हरि कै (रस०, नवल०)। हारि कै-हरि कै (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाइहैं पकरि तब पाइहै न कैसें हू तू
थोरो इठलाति ये तौ अति इठलात हैं।
बरजति क्यों न तो सों कब की कहति मेरे
मोहन के नैन तेरे नैन छ्वै छ्वै जात हैं ॥२३॥

रामजनी को वचन कृष्ण सों, यथा—(सवैया)

कौनहूँ तोष कहा भयो 'केसव' कामिनि कोटिक सों हित ठाँटें।
रंच न साध सधै सुख की बिनु राधिकै आधिक लोचन डाँटें।
क्यों खरी सीतल बास करै मुख जौ भखियै घनसार के साँटें।
लालच हाथ रहै, ब्रजनाथ पै प्यास बुझाइ न ओस के चाँटें ॥२४।

संन्यासिनी को वचन राधिका सों, यथा—(कवित्त)

छूटै न छुटाएँ जब करिहौ धौं कैसी बात
'केसोदास' अनयास प्यास भूख भागिहै।
खेलु भूलि जाइगो, जुड़ाइगो न चित्तु चेति,
कछू ना सुहाइगो री रैनि दिन जागिहै।
ताते तें तपति दूनी सीरे तें सहसगुनो
उपजि परैगी उर ऐसी और आगि है।
एंड़ सो एंड़ाइ जिनि अंचलु उड़ात, ओली,
ओड़ति हौं, काहू की जु डीठि उड़ि लागिहै ॥२५॥

संन्यासिनी को वचन कृष्ण सों, यथा—(कवित्त)

सीतल हू हीतल तिहारें न बसति वह
तुम न तजत तिल ताको उर ताप-गेहु।
आपनो ज्यौ हीरा सो पराएँ हाथ ब्रजनाथ
दै कै तौ अकाथ हाथ मैन ऐसो मन लेहु।
एते पर 'केसोदास' तुम्हैं ना प्रवाह वाहि
वहै जक लागी, भागी भूख सुख भूल्यौ देहु।
माड़ो मुख, छाड़ै छिनु छल न छबीले लाल
ऐसी तौ गँवारिनि सों तुमहीं निबाहौ नेहु ॥२६॥

---

[२३] कमल-अमल (बाल०, रस०, नवल०)। प्रसिद्ध-करम (बाल०, रस०, नवल०)। चोर परम-चोर मरम (बाल०, रस०)। तो सों- तू हौं (रस०)। मोहन के नैन-मोहन के मने (बाल०, रस०, नवल०)।

[२४] जौ भखियै-जोर भखी (बाल०, रस०)।

[२५] बात-तब (नवल०)। भागिहै-लागिहै (बाल०)। जुड़ाइगो न-जुड़ाइगो री (बाल०)।

[२६] हाथ-साथ (बाल०, रस०)। मैन ऐसो-माखन सो (बाल०)। माड़ो-माँजो (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पटइनि को वचन राधिका सों, यथा–(सवैया)

याही कों मेरी गुसाइँनि में मिलई पहिलें बतियाँ छलि छैलो।
बातें मिलै अँखियाँ मिलई सखियानि के आँखिनि पारि कै ऐलो।
आँखि मिले मुहुँ लागि रहे मनु लेहु मिलैऽव गहैं हम गैलो।
मिलें मन माई कहा करिहौ मुँह ही के मिलें तौ कियो मन मैलो ॥२७॥

पुनः –(सवैया)

गेह की नेह की देह की दीवे की भूषन की जिन भूख भगाई।
मोहिं हँसी दुख दोऊ दई तिनहीं सो जनावति है चतुराई।
'केसवदास' बड़ाई दई तौ कहा भयो जाति-सुभाव न जाई।
सोने सिंगारहु सोंधे चढ़ावहु पीतर की पितराई न जाई ॥२८॥

पटइनि को वचन कृष्ण सों, यथा–(सवैया)

वा मृगनैनी ज्यों औरन हीं जु लगावत हौ मुहँ ऐसे न हूजे।
सोनेंई सीसु जु पीतर होइ तौ 'केसव' कैसहुँ हाथ न छूजे।
आप गिरा गुन जौ सिखवै तऊ काकन कोकिल ज्यों कल कूजे।
सुंदर स्याम बिराम करौ कछु आम की साध न आमिलो पूजै ॥२९॥

(दोहा)

बैन ऐन-सुख मैन करि कहे सखिनि के धर्म।
'केसव' कहौं कछूक अब, तिनके कोबिद कर्म ॥३०॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां
सखीजनवर्णनं नाम द्वादशः प्रभावः ॥ १२ ॥

१३

अथ सखीजन-कर्म-वर्णन–(दोहा)

सिक्षा, बिनय मनाइबो, मिलिबो करि सिंगार।
झुकि अरु देई उराहनो यह तिनके ब्योहार ॥१॥

---

[२७] मुहुँ–मनु (रस०)। लागि रहै-सौं मिलिहैं (बाल०)।
[२८] भगाई-भराई (नवल०)। चढ़ावहु-बिनायन (बाल०)।
[३०] धर्म-नर्म (बाल०); कर्म (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राधिका सों शिक्षा--(सवैया)

नाह लगें सुख सौति दहें दुख 'नाहिं' लगें दुख देह दहैगो।
'नाहीं' अबै सुख देति है 'केसव' नाह सदा सुख देत रहैगो।
'नाहीं' तें नाही रो नाहीं भलाई भली सब नाह ही तें पै कहैगो।
नाह सों नेह निबाहि बलाइ ल्यौं 'नाहीं' सों नेह कहाँ निबहैगो।।२।।

कृष्ण की शिक्षा--(कवित्त)

कुंकम उबटि कुमकुमा के न्हवाइ जल
सोंधो सिर लाइ याहि लाए कहा रास मैं।
चंदन चढ़ाइ फूल-माल पहिराइ भूलि
बे ही काज आँजि माँजि कीनो है प्रकास मैं।
'केसव' कपूर पूरि काहे कौं खवावौ पान
जौ पै मन मगन है ऐसे ही बिलास मैं।
वाही न मनावौ हरि हाहा करि पाइ परि
सबही सुबास बसै जाके मुखबास मैं।।३।।

राधा की बिनय--(सवैया)

ऐसें ही क्यों चुप ह्वै रहिहौं सखि हौं सहिहौं सतराहट सौ लों।
क्यों सरिहै मिलिबे बिन तोहि तऊ मिलियै मिलियै दिन जौ लों।
'केसव' कोरि करौ उपचार मिले को कहा मिलिहै सुख तौ लों।
देखि धौं अंगनि आरसी लै मिलिहै पिय सों मनहीं मन कौ लों।।४।।

कृष्ण सों बिनय--(कवित्त)

कँज के से फूल नैन दारयौं से दसन ऐन
बिंब से अधर हास सुधा सो सुधारयो है।
बेंनी पिकबेंनी की त्रिबेंनी सी बनाइ गुही
बार के सेवार करिहाँ कों करि हारयो है।
कीने कुच अमल कलपतरु के से फल
'केसोदास' यातें बिधि मुगध बिचारयो है।
देखौ न गुपाल सखी मेरी को सरीर सब
सोने सों सँवारि सब सोंधे सों सँवारयो है।।५।।

---

[२] बलाइ ल्यौं--री बावरी (बाल०)।
[५] कंज-सुख (रस०)। बिंब-लाल (बाल०, रस०)। गुही-बीर (बाल०)। बार कै सेवार--धार से बारीक (बाल०); बारिक बारि सों (रस०)। सब सोंधे--मानो मैन (बाल०); मन मैन (रस०)। सँवारयो-सुधारयो (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राधा को मनाइबो–(सवैया)

'नाहीं' सिखावति नाहीं भली सखि पावक सों तिनको मुँह डाढ़ो।
भौंहनि के भुलवौ भटू भावनि नैननि के मत सों हित बाढ़ो।
कालि तें कालि के ह्वैन दई हँसी, पाइँ परों न परो मुँहु काढ़ो।
राजु करो यह राजु सदा रहै 'केसव' चित्र ज्यों आगे ह्वै ठाढ़ो।।६।।

पुनः–(सवैया)

रीझि रिझाइ झरोखनि झाँकि रही मुख देखि दिखाइ तुम्हाहीं।
बोलन आएँ अबोली भई अब 'केसव' ऐसी हमें न सुहाहीं।।
मैं बहुतै बहराईं हैं तो सी री तू बहरावति मोहि वृथाहीं।
एहीं सयान सदा चलिहौ हरि सों हँसि 'हाँ' करै मोही सों नाहीं।।७।।

कृष्ण को मनाइबो–(सवैया)

भूषन-भेद बनाइ कै 'केसव' फूल बनाइ बनाइ के बागे।
भाग बढ़ाइ सुहाग बढ़ाइ कै राग बढ़ाइ हियें अनुरागे।।
पाइनि लागत, सोंधो चढ़ावत पान खवावतहीं निसि जागे।
कान्ह चलौ उठि बैठे कहा? मन सूसि परायोऽब रूसन लागे।।८।।

राधा को मिलैबो–(सवैया)

दुर्लभ देवनि हूँ कों सु तौ हरि को मन हाँसिन ही हरि लीनो।
टारहु जैं हिय तें कबहूँ अब ज्यों गुरु को दियो मंत्र प्रवीनो।
लेति लियो तौ न देत दियो अब मानहु ता दिन दुक्ख नवीनो।
माँगन आवै तौ दीजै भटू अपनो मन, जौ वह जाइ न दीनो।।९।।

पुनः यथा

आजु देवारि की राति जौ कीजै तौ आजु के द्योस लौं ह्वैहै सभागी।
बात सुनी जननी पै जबै तब ही मति मान की नींद तें जागी।
अंग सिंगारि निहारि निसा तिन चित्त बिहारनि सों अनुरागी।
दीप दै देवनि जाइ जुवा मिलि 'केसवराइ' सों खेलन लागी।।१०।।

राधिका को मिलैबो–(कवित्त)

जौ हौं गनौं औगुननि तौ तू गनै गुन गन
जौ हौं गनौं गुन तौ तू औगुन के गन में।

---

[६] पावक–जावक (बाल०)। न परो तनप्यो (नवल०)। यह छंद रस० में नहीं है।
[८] चढ़ावत-लगावत (बाल०, नवल०)।
[९] मन–पुन (बाल०)। हरि-हठि (नवल०)। मानहु–मानिहौ (बाल०)। यह छंद रस० में नहीं है।
[१०] यह छंद रस० में नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'केसोदास' ऐसें प्रीति छिपावति छलनि में
जैसें छनछबि छूटै छिपै जाइ घन में।
भारी है निठुर निसि भादों की भयावनी में
सु क्यों बसै घर जाको पीउ बसै बन में।
बैठे तें उठावै, उठि चले तें मचलि रहै,
सोई मेरी क्यों न कहै जोई तेरे मन में ॥११॥

कृष्ण को मिलैबो—(कवित्त)

सिखै हारी सखी डरपाइ हारी कादंबिनी
दामिनी दिखाइ हारी दिसि अधरात की।
झुकि झुकि हारी रति मारि मारि हार्‌यो मार
हारी झकझोरत त्रिबिध गति बात की।
दई निरदई दई यादि काहे ऐसी मति
जारति जु रैन दिन दाह ऐसे गात की।
कैसें हूँ न मानै हौं मनाइ हारी 'केसोराइ'
बोलि हारी कोकिला बुलाइ हारी चातकी ॥१२॥

राधिका को शृंगार—(सवैया)

दीनो मैं पाइ झँवाइ महावर आँज्यों मैं आँजन आँखि सुहाई।
भूषन भूषित कीने मैं 'केसव' माल मनोहर मैं पहिराई।
दर्पन लै अब दीपति देखि सखी, सब अंग सिंगारि सिधाई।
बंक बिलोकनि अंक लै पान खवावै को कान्ह-कुमार की नाई ॥१३॥

कृष्ण को शृंगार—(सवैया)

पाग बनी अरु बागो बन्यो बटुवा पटुका कटि राजत नीको।
सोंधो बन्यो अति चारु, मनोहर हार बन्यो उर भावतो जी को।
बीरा बन्यो सुख खात मनोहर मोहिं सिंगार लग्यो सब फीको।
भाल भली विधि जौ लौं गुपाल कियो उहिं बाल बनाइ न टीको ॥१४॥

राधा को झुकिबो—(कवित्त)

फिरि फिरि फेरि फेरि फेर्‌यो मैं हरी को मन,
मन फेरें फिरी पुन भाग की भली घरी।
पल पल पाइनि परति हुती जिनकें सु
पर्‌यो पीय तेरें पाइ पी के पाइ हौं परी।

---

[११] औगुन के गन-अगुनै गुनन (नवल०)। जैसें ०-जैसे छन छूटि छबि छूटि छपै छन में (वाल०)।

[१२] दिसि-निसि (रस०)। याहि-वाहि (बाल०, नवल०)। दिन-ऐन (बाल०, रस०, नवल०)।

[१३] मैं-हू (नवल०)। अब-कर (बाल०)।

[१४] कटि राजत—कहरा कटि (बाल०, रस०) घरी-घरी (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़िनि की बेटिनि की बड़ीयै बड़ाई मेटि,
'केसोदास' बड़िनि में जौं तू हौं बड़ी करी।
हौं तौ जानी मनाएँ तें मेरो गुन मानिहै मैं
ताहि क्यों मनाई तैं जु मो ही सों मनो धरी ॥१५॥

पुनः—(सवैया)

'केसवराइ' बुलावत हैं चित चारु बिलोचन नीचे करौ जू।
कालि करै वर एक बिसौ परौं बीस बिसे ब्रत तें न टरौ जू।
आगि लगै तेरे कालि के सीस, परौं पर जाइ बजागि परौ जू।
आजु मिलौ तौ मिलौ ब्रजराजहि नाहिं तौ नीके है राज करौ जू ॥१६॥

कृष्ण को झुकिबो—(सवैया)

तासों बसाइ कहा कहि 'केसव' कामलता तरु तेंदु रई।
विधि की लिपि लोपी न जाइ अमोलिक लै मनि सीस भुजंग दई।
अपनो मुख देखहु आरसी लै पुनि बात कहौ परमान लई।
वृषभान-सुता पर और सुहागिल बाउ कहाँ लगि जीभ गई ॥१७॥

राधिका सों उराहनो—(कवित्त)

'केसोदास' कौन बड़ी रूप कुनकानि पै
अनोखो एक तेरे हीं अनूप उर ओलियै।
आपनें सयान काहू मानसै न मानै तू
गुमान के बिमान बैठि ब्योम ब्योम डोलियै।
ऐंड़ सों ऐंड़ाइ अति अंचल उड़ाइ ऐसी
छाड़ि ऐंड़ बैंड़ चितवनि निरमोलियै।
दीनो मन हाथ जिनि हीरा सो हरषि के ता
हरि सों हरिननैनी हरें हूँ तौ वोलियै ॥१८॥

कृष्ण को उराहनो—(कबित्त)

सौंहनि को सोच न सकोच काहू बीच को को
पोंछौ प्यारे पीक-लीक लोचन किनारे की।
माखन की चोरी की है थोरो थोरी मोहू सुधि
जानति बिसेष वहै जोरी है जु बारे की।

---

[१५] बड़िनि की०—बड़ी बड़ी बधुन की (बाल०, रस०)। जानौ—जान्यो मन में तू (नवल०)। मनी धरी-भली करी (नवल०)।

[१६] नीचे करौ—चित चेतहु (बाल०)। करै वर—कलेवर (बाल०)। एक—बीस (नवल०)। है—हौं (नवल०)। यह छंद रस० में नहीं है।

[१७] लिपि—गति (नवल०)। बाउ—बारो (बाल०,नवल०)। कहाँ-जहाँ (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

[१८] अनूप—अनख (बाल०, नवल०)। काहू—काहे (बाल०)।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरियै कुमति और कहा कहौं 'केसोदास'
लागति है लाल लाज इहाँ पाइँ धारे की।
एती है झुठाई, वह अबहीं रुठाई यह
छारहू तौ छूटी नाहि पाइनि के पारे की ॥१९॥

राधावचन सखी सों अपरं च—(सवैया)

आँधी सो धाइ है दाई दवारि सी दासिनि के दुख देह दही है।
ताप के तूल तबोलिनि मालिनि-नाइनि नाह के नेह नही है।
तेरी सौं तेरी सौं मेरी सखी सुनि तेरी अकेली की आस रही है।
कान्ह मिलाउ कि मोहि न पाइहै आपने जी की मैं तोसों कही है ॥२०॥

(दोहा)

इहि विधि स्याम-सिंगार-रस बहु विधि बरनो लोइ।
चारि बरन चहुँ आश्रमनि कहत सुनत सुख होइ ॥२१॥
राधा राधा-रमन के करयो सिंगार सुबेष।
रस आदिक आगे कहौं और रसनि को भेष ॥२२॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां सखीजन-
कर्मवर्णनं नाम त्रयोदशः प्रभावः ॥१३॥

१४

अथ हास्यरस-लक्षण—(दोहा)

नयन बयन कछु करत जब मन को मोद उदोत।
चतुर चित्त पहिचानियै, तहाँ हास्य रस होत ॥१॥

हास के भेद—(दोहा)

मंदहास कलहास पुनि, कहि 'केसव' अतिहास।
कोविद कवि बरनत सबै अरु चौथो परिहास ॥२॥

मंदहास-लक्षण—(दोहा)

बिगसहिं नयन, कपोल कछु दसन, दसन के बास।
मंदहास तासों कहत कोबिद 'केसवदास' ॥३॥

---

[१९] बिसेष वहै—वहै किसोरी (बाल०)। रुठाई—रुढ़ाई (रस०)।
[२०] रस—सब (रस०)। लोइ—सोइ (रस०)।
[३] दसन के—बसन के (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरनत बाढ़ै ग्रंथ बहु, कहे न 'केसवदास'।
औरौ रस यों जानियौ सबै प्रछन्न प्रकास ॥४॥

राधिका को मंद हास, यथा–(सवैया)

भेद की बात सुने तें कछू वह मासक तें मुसुक्यान लगी है।
बैठति है तिनमें हठि कै जिनकी तुमसों मति प्रेम पगी है।
जानति हौं नलराज दमैंती की दूतकथा रस-रंग रँगी है।
पूजैगी साध सबै सुख की बड़भाग कीं 'केसव' ज्योति जगी है ॥५॥

अपरं च–(सवैया)

जानै को पान खवावत क्यों हूँ गई गड़ि अंगुरी ओठ नवीने।
तैं चितयो तवहीं तिहि रीति री लाल के लोचन लीलि से लीने।
बात कही हरए हँसि 'केसव' मैं समुझो वे महारस भीने।
जानति हौं पिय के जिय के अभिलाष सबै परिपूरन कीने ॥६॥

श्रीकृष्ण को मंद हास, यथा–(कवित्त)

दसन-बसन माँझ दमकै दसन-दुति
बरषि मदन सर करत अचेत हौ।
झाईं झलकत लोल लोचन कपोलनि में
मोल लेत मन क्रम बचन समेत हौ।
भौंहैं कहें देत भाउ सुनौ मेरी भावती के
भावते छबीले लाल मौन कौन हेत हौ।
'केसव' प्रकास हास हँसि कहा लेहुगे जू
ऐसी ही हँसे तें तौ हिये को हरे लेत हौ ॥७॥

कल हास-लक्षण–(दोहा)

जहँ सुनियै कल ध्वनि कछू कोमल बिमल विलास।
'केसव' तन मन मोहियै, बरनहु कबि कल हास ॥८॥

राधिका को कल हास, यथा–(सवैया)

काछैं सितासित काछनी 'केसव' पातुर ज्यों पुतरीनि बिचारौ।
कोटि कटाच्छ नचै गति भेद नचावत नायकु नेह निनारौ।

---

[४] बहु–जिहि (रस०)।
[५] यह छंद रस० में नहीं है।
[६] रीति–भाँति (रस०, नवल०)। केसव–कै सुनि (रस०, नवल०)।
[७] दमकै–दरसै (बाल०, नवल०, रस०)। सर–दुति (रस०)। देत–भेद (बाल०)। सुनौ–कहौ (रस०, नवल०)। हँसे तें०–तौ हँसनि ही तें हियो हरि (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाजत है मृदुहासु मृदंग सु दीपति दीपनि को उजियारौ।
देखत ह्रौ हरि देखि तुम्हैं यह होतु है आंखिन ही में अखारौ ॥९॥

अपरं च, यथा—(सवैया)

प्रेम घने रसबैन सने गति नैननि की सर-मैन भई ही।
बाल-बहिक्रम-दीपति देह त्रिबिक्रम की गति लीलि लई ही।
भौंहैं चढ़ाइ सखीनि दुराइ इतै मुसुकाइ उतै चितई ही।
'केसव' पाइहौ आजु भलें चित चोरि लै कालि गुवालि गई ही ॥१०॥

श्रीकृष्ण को कल हास, यथा—(सवैया)

आजु सखी हरि तोसों कछू बड़ी बार लौं बात कही रस भीनी।
मोलि गरैं पटुका पुनि 'केसव' हारि हियें मनुहारि सी कीनी।
मोहि अचंभो महा सु हहा कहि बाँह कहा बड़ी बार लौं लीनी।
तैं सिर हाथ दियो उनिकें उनि गाँठि कहा हँसि आँचरु दीनी ॥११॥

अतिहास-लक्षण—(दोहा)

जहाँ हँसहिं निरसंक ह्वै प्रकटहिं सुख सुख-बास।
आधे आधे बरन पद, उपजि परत अतिहास ॥१२॥

राधिका को अतिहास, यथा—(कवित्त)

तैसीयै जगत ज्योति सीस सीसफूलनि की,
चिलकत तरुनि तिलक तेरे भाल को।
तैसीयै दसन-दुति दमकति 'केसोदास'
तैसोई लसतु लाल लाल कंठमाल को।
तैसीयै चमक चारु चिबुक कपोलनि की
चमकत तैसो नकमोती चल चाल को।
हरें हरें हँसि नेक चतुर चपलनैनि
चित्त चकचौंधे मेरे मदन गुपाल को ॥१३॥

श्रीकृष्ण को अतिहास, यथा—(कवित्त)

गिरि गिरि उठि उठि रीझि रीझि लागैं कंठ
बीच बीच न्यारे होत छबि न्यारी न्यारी सों।

---

[९] निनारो–निन्यारो (रस०); निहारो (बाल०, नवल०)। ही में–बीच (नवल०)।
[१०] सर मैन–रस मैन (नवल०)। यह छंद रस० में नहीं है।
[११] बाँह–चाह (नवल०)। बड़ी–बहु (बाल०, नवल०)।
[१३ [चिलकत–झिलकत (बाल०, नवल०)। तरुनि–तिलनि (बाल०)।
चमकत–झलकत (बाल०, रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपुस में अकुलाइ आवे आवे आखरनि
आछी आछी बात कहँ आछी एक यारी सों।
सुनत सुहाइ सब समुझि परै न कछू
'केसोदास' की सौं दुरि देखे मैं दुस्यारी सों।
तरनि-तनूजा-तीर तरवर-तर ठाढ़े
तारीं दै दै हँसत कुँवर कान्ह प्यारी सों ॥१४॥

अथ परिहास-लक्षण—(दोहा)

जहँ परिजन सब हँसि उठैं तजि दंपति की कानि।
'केसव' कौनहु बुद्धिबल सो परिहास बखानि ॥१५॥

राधा को परिहास, यथा—(सवैया)

आई है एक महाबन तें तिय गावति मानो गिरा पगु धारी।
सुंदरता जनु काम की कामिनि, बोलि कह्यो बृषभानु-दुलारी।
गोपिकै ल्याइ गुपालहि वै अकुलाइ मिली उठि आदर भारी।
'केसव' भेटत ही भरि अंक हँसों सब कीक दै गोपकुमारी ॥१६॥

श्रीकृष्ण को परिहास, यथा—(सवैया)

सखि बात सुनौ इक मोहन की निकसी मटुकी सिर री हलकै।
पुनि बाँधि लई सुनिये नतनारु कहूँ कहूँ बुंद करी छलकै।
निकसीं उहि गैल हुते जहँ मोहन लीनी उतारि जवै चल कै।
पतुकी धरी स्याम खिसाइ रहे उत ग्वारि हँसी मुख आँचल कै ॥१७॥

अथ करुण रस-लक्षण—(दोहा)

प्रिय के बिप्रिय करन तें आनि करुन रस होत।
ऐसो बरन बखानियें जैसो तरुन कपोत ॥१८॥

---

[१४] कछू—अब (बाल०, रस०)।

[१६] मानो—गीत (बाल०)। उठि—करि (रस०)। आदर-सदर (नवल०)। कीक—कूक (रस०)। कीक दै—की कहै (बाल०)।

[१७] सखि—जुवती सुनि औगुन मोहन के (रस०)। री हल कै—रीतियै लै (रस०)। सुनिए—सु नए (रस०)। नतनारु-नतनासु (रस०)। पतुकी—पितुखी (रस०)। यह छंद बाल० में नहीं है। यह दोहा रस० में अधिक है—

कह्यो हास रस बरनि यों अरु रस सुगम कबित्त।
करुनादिक सिंगारमय बरने समरथ चित्त ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राधिकाजू को करुण रस, यथा–(कवित्त)

तेज सूर से अपार, चंद्रमा से सुकुमार,
संभु से उदार उर उर धरियतु है।
इंद्रजू से प्रभु पूरे, रामजू से रन सूरे
कामजू से रूप रूरे हिय हरियतु है।
सागर से धीर गनपति से चतुर अति
ऐसे अबिबेक कैसे दिन भरियतु है।
नंद मति मंद महा यसुदा से कहौं कहा,
ऐसे पूत पाइ पसुपाल करियतु है॥१९॥

श्रीकृष्ण को करुण रस, यथा–(कवित्त)

चंपे की सी कली भली 'केसव' सुबास भरी,
रूप की सी मंजरी मधुप मन भाइयै।
बेद की सी बानी अति बानी तें सयानी देव
राइ की सी रानी जानी जग सुखदाइयै।
काम की कला सी, चपला सी, काम अबला सी
कमला सी देह धरें पूरे पुन्य पाइयै।
कौनें कीनी निपट कुचालि जाति ग्वारि ऐसी
राधिका कुँवरि पर गोरस बिचाइयै॥२०॥

अथ रौद्र रस-लक्षण–(दोहा)

होहि रौद्र रस क्रोधमय बिग्रह उग्र सरीर।
अरुन बरन बरनत सबै कहि 'केसव' मति धीर॥२१॥

राधिकाजू को रौद्र रस, यथा–(कवित्त)

केहरी कपोत करि केर मृग मीन फनि
सुक पिक कंज खंजरीट बन लीनो है।
मृदुल मृनाल बिंब चंपक मराल बेलि
कुंकुम दाड़िम कहँ दूनो दुख दीनो है।

---

[१९] उदार उर–उदार अति (नवल०)। अति-चर (बाल०)। यह छंद रस० में नहीं है।

[२०] भली–अली (नवल०)। भरी–भली (नवल०)। वेद की–देव की (रस०)। कुचालि–कुजाति (बाल०, नवल०)। पर–पहँ (रस०)।

[२१] केहरी कपोत करि केर–केहरी कुबास करि केरि (बाल०); केहरी की हरी कटि केरी (नवल०); केहरी कपोत कुंभ मीन (रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जारत कनक तन तनक तनक ससि,
बढ़त घटत बंधुजीव गंधहीनो है।
'केसोदास' दास भए कोबिद कुँवर कान्ह
राधिका कुँवरि कोप कौन पर कीनो है ॥२२॥

श्रीकृष्ण को रौद्र रस, यथा–(कवित्त)

मींडि मारयो कलह वियोग मारयो बोरि कै
मरोरि मारयो अभिमान भारयो भय भान्यो है।
सबको सुहाग अनुराग लूटि लीनो दीनो
राधिका कुँवरि कहँ सब सुख सान्यो है।
कपट कपटि डारयौ निपट कै औरनि सों
मेटी पहिचानि मन में हूँ पहिचान्यो है।
जीत्यो रति रन मथ्यो मनमथ हू को मन
'केसोदास' कौन कहुँ रोष उर आन्यो है ॥२३॥

अथ वीर रस-लक्षण–(दोहा)

होहि बीर उत्साहमय गौर बरन दुति अंग।
अति उदार गंभीर कहि 'केसव' पाइ प्रसंग ॥२४॥

राधिकाजू को वीर रस, यथा–(कवित्त)

गति गजराज साजि देह की दिपति बाजि,
हाव रथ भाव पत्तिराजि चली चाल सों।
'केसोदास' मंदहास असि कुच भट भिरे
भेंट भए प्रतिभट भाले नखजाल सों।
लाज साजि कुलकानि-सोच पोच भय भानि,
भौंहैं धनु तानि बान लोचन बिसाल सों।
प्रेम को कवच कसि साहस सहायक लै
जीत्यो रति-रन आजु मदन गुपाल सों ॥२५॥

श्रीकृष्ण को वीर रस, यथा–(कवित्त)

अघ ज्यों उदारिहौं कि बक ज्यों बिदारिहौ कि
केस गहि 'केसोदास' केसी ज्यों पछारिहौ।
हरिहौ कि प्राननाथ पूतना के प्राननि ज्यों
बन तें कि बनमाली काली ज्यों निकारिहौ।

---

[२३] कहँ–कर (रस०)।
[२५] हाव रथ–हास रथ (रस०)। चाल–बाल (बाल०)। जाल–जान (बाल०)।
कसि–साजि (बाल०)। रति–राग (बाल०)। जीत्यो–जीति (बाल०,नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिहौ बिमद घनबाहन ज्यों घनस्याम
काहू सों न हारे हरि याही सों क्यों हारिहौ।
वे ही काम काम बर ब्रज की कुमारिकानि
मारतु है नंद के कुमार कब मारिहौ ॥२६॥

अथ भयानक रस-लक्षण—(दोहा)

होइ भयानक रस सदा 'केसव' स्याम सरीर।
जाको देखत सुनतहीं, उपजि परति भय-भीर ॥२७॥

राधिकाजू को भयानक रस, यथा—(सवैया)

भुवमंडल मंडित कै घनघोर उठे दिविमंडल मंडि गटी।
घहराति घटा घन बात के संघट घोष घटै न घटी हूँ घटी।
दस हूँ दिसि 'केसव' दामिनि देखि लगी प्रिय कामिनि-कंठ-तटी।
जनु पंथहिं पाइ पुरंदर के बन पावक की लपटैं झपटी ॥२८॥

श्रीकृष्ण को भयानक रस, यथा—(कवित्त)

रोष में रस के बोल विष तें सरस होत
जानै सो प्रबल पित्त दाखैं जिन चाखी हैं।
'केसोदास' दुख दीबे लायक भयेऽब तुम
आज लगि जाकी जी में आँखैं अभिलाषी हैं।
सूधे ह्वै सुधारिबे कौं आए सिखवन मोंहि
सूधे हूँ में सूधी बातैं मो सों उन भाखी हैं।
ऐसे में हौं कैसें जाउँ दुरि हूँ धौं देखौ जाइ
काम की कमान सी चढ़ाइ भौंह राखी हैं ॥२९॥

अथ बीभत्स रस-लक्षण—(दोहा)

निंदा भय बीभत्स रस, नील बरन बपु तास।
'केसव' देखत सुनत ही तन मन होइ उदास ॥३०॥

राधिकाजू को बीभत्स रस, यथा—(कवित्त)

माता ही को मास तोहि लागतु है मीठो मुख
पियत पिता को लोहू नेक ना घिनाति है।
भैयनि के कंठनि को काटत न कसकति
तेरो हियो कैसो है जु कहति सिहाति है।

---

[२६] केस गहि–कंस ज्यौं कि (वाल०, रस०)। करिहौ–हरिहौ (रस०)।
[२८] गटी–घटी (नवल०)। घन–घट (वाल०, रस०)। पंथहि–पारथ (नवल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब जब होत भेंट तब तब मेरी भटू
ऐसी सौंहैं दिन उठि खाति न अघाति है।
प्रेतिनी पिसाचिनी निसाचरी की जाई है तू
'केसोदास' की सौं कहि तेरी कौन जाति है ॥३१॥

श्रीकृष्ण को बीभत्स रस, यथा—(कबित्त)

टूटे ठाट घुन घुने धूम धूरि सों जु सने
झींगुर छगोड़ी साँप बीछिन की घात जू।
कंटक-कलित त्रिन-बलित बिगंध जल
तिनके तलप-तल ताकों ललचात जू।
कुलटा कुचील गात अंध तम अधरात
कहि न सकत बात अति अकुलात जू।
छेंड़ी में घुसौ कि घर ईंधन के घनस्याम
पर-घरनीनि पहँ जात न घिनात जू ॥३२॥

अथ अद्भुत रस-लक्षण—(दोहा)

होइ अचंभो देखि सुनि सो अद्भुत रस जानि।
'केसोदास' बिलास-निधि, पीत बरन बपु आनि ॥३३॥

राधिकाजू को अद्भुत रस, यथा—(कबित्त)

'केसोदास' बाल बैस दीपति तरुनि तेरी
बानी लघु बरनत बुधि परमान की।
कोमल अमल उर उरज कठोर जाति
अबला पै बलबीर-बंधान-बिधान की।
चंचल चितौनि चित्त अचल सुभाव साधु
सकल असाधु भाव काम की कथान की।
बेचति फिरति दधि, लेत तिन्हैं मोल लेत
अदभुत रसभरी बेटी बृषभान की ॥३४॥

अन्यच्च, यथा—(कबित्त)

ब्रज की कुमारिका वे लीनें सुक-सारिका
पढ़ावैं कोक कारिकानि 'केसव' सबै निबाहि।
गोरी गोरी भोरी भोरी थोरी थोरी बैस फिरैं
देवता-सी दौरी दौरी आई चोराचोरी चाहि।

---

[३२] नेक--क्योंहू (रस०)। घिनाति--अघाति (रस०; नवल०)।
[३२] घुने- घने (रस०, नवल०)। धूरि सौं जु--धूम सनि (रस०); धूरि सैनि (बाल०)। अधरात--अधिराति (रस०)।
[३४] बरनत--बरनन (बाल०, रस०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिन गुन तेरी आनि भृकुटी कमान तानि
कुटिल-कटाछ-बान यहे अचरज आहि।
एते मान ढोठ ईठ तेरो को अदीठ मन
पीठ दै दै मारती पै चूकती न कोऊ ताहि ॥३५॥

श्रीकृष्ण को अद्‌भुत रस, यथा– (कवित्त)

माखन के चोर मधु-चोर दधि-दूध-चोर
देखे नाहिं देखत हो चित चोरि लेत हैं।
पुरुष पुरान अरु पूरन पुरान इन्हैं
पुरुष पुरान सु कहत किहिं हेत हैं।
'केसोदास' देखि देखि सुरनि की सुंदरी वे
करति बिचार सब सुमति-समेत हैं।
देखि गति गोपिका की भूलि जात निज गति
अगतिन कैसें धौं परम गति देत हैं ॥३६॥

अथ सम रस-लक्षण– (दोहा)

सब तें होय उदास मन, बसै एक हीं ठौर।
ताही सों समरस कहत 'केसव' कबि-सिरमौर ॥३७॥

राधिकाजू को सम रस, यथा– (सवैया)

देखैं नहीं अरबिंदनि त्यौं चित चंद की आनंद-कंद निकाई।
कामिनि काम-कथा करै कान न ताकै त्रिधाम की सुंदरताई।
देखि गई जब तें तुमकों तब तें कछु वाहि न देख्यो सुहाई।
छाड़ैगी देह जु देखें बिना अहो देहु न कान्ह कहूँ ह्वै दिखाई ॥३८॥

---

[३५] कुटिल--नयन (बाल०)। मान--पर (रस०)।
[३६] चोरि लेत--हरि लेत (रस०, नवल०)। पुरुष--पूरन (बाल०, रस०)। पूरन--पूरुष (बाल०, रस०)। सब--सच (बाल०)। सुमति--सुरनि (रस०)। अगतिन--अगतनि (रस०)।

नवल० में नीचे के सवैये की टीका इसलिए नहीं की गई है कि 'या कवित्त बहुत प्राचीन पुस्तकन में नाहीं मिलत'—

बन मोहिं मिले हूते केसवराइ कहा बरनों गुन गूढ़ उवारे।
जसुदा पै गई तब रोहनी पै चुटि आहि गुहावत जाइ निहारे।
घर जाउँ तु सोवत हैं फिर जाउँ तौ नंद पै खात बरा दधिवारे।
सपनो यह सत्त किधौं सजनी हरि बाहिर होत बड़े घरबारे ॥३७॥

[३८] देह--प्रान (बाल०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिगतिबंध–

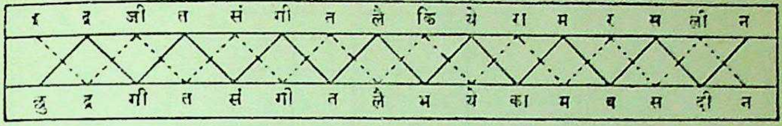

[कविप्रिया, २२७–७२]

कपाटबंध–

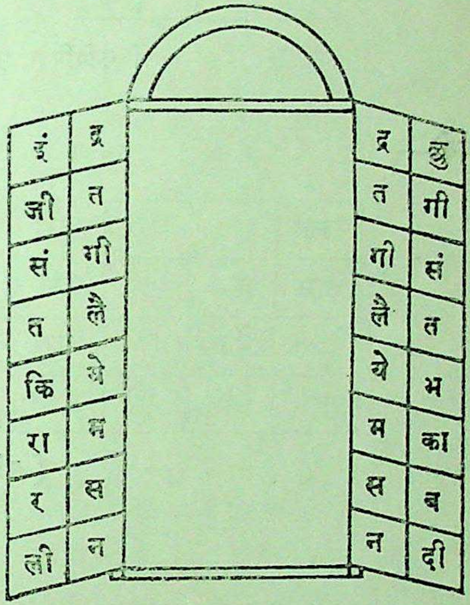

[कविप्रिया, २२७–७२]

अश्वगतिबंध–

[कविप्रिया, २२७–७२]

गोमूत्रिकाबंध–

इं	जी	सं	त	कि	रा	र	ली
द्र	त	गी	लै	ये	म	स	न
छु	गी	सं	त	भ	का	ब	दी

[कविप्रिया, २२७–७२]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतागत चतुष्पदी–१

रा	का	रा	ज
मा	स	मा	स
रा	धा	धी	त
सा	ल	ली	सु

[कविप्रिया, पृष्ठ २२७–छंद ७३]

गतागत चतुष्पदी–२

राका	राज	जरा	कारा
मास	मास	समा	समा
राधा	धीत	तधी	धारा
साल	लीसु	सुली	लसा

[कविप्रिया, २२७–७३]

त्रिपदी–१

रा	दे	न	दे	ग	प	सु	र	म	धा
म	व	र	व	ति	र	ध	न	द	वि
बा	दे	गु	दे	ग	प	कु	र	ह	धा

[कविप्रिया, २२७–७४]

त्रिपदी–२

राम	वन	देव	तिप	सुध	नम	धा
दे	र	ग	र	र	द	वि
बाम	बगु	देव	तिप	कुध	नह	धा

[कविप्रिया, २२७–७४]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रिपदी—३

राम	नर	गति	सुध	सद
देव	देव	पर	रन	धारि
बाम	गुर	गति	कुध	हद

[कविप्रिया, २२७–७४]

चरणगुप्त—

	५		४		३	
	रा →	जतश्रँ	ग	रसबि	र	
	स र ति	अतिस सभेव दुतिब	र प ढ़	ससर गपग तिअति	स प्र ब	
६	य	नवम	न ९	मतिदे	व	२
	सु घ र	बरन रननि रुचिली	व र न	रनसु चितरु तनग	सु चि न	
७	प्र	गटप्र	भी	नमति	न	१
			८			

[कविप्रिया, २२७–७५, ७६]

सर्वतोभद्र—१

सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
न	र	ली	न	न	ली	र	न
न	र	ली	न	न	ली	र	न
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी

[कविप्रिया, २२७–७७]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वतोभद्र—२

काम	देव	चित्त	दाहि
बाम	देव	मित्त	ताहि
दाम	देव	चित्त	चाहि
धाम	देव	नित्त	नाहि

[कविप्रिया, २२७–७८]

सर्वतोमुख—१

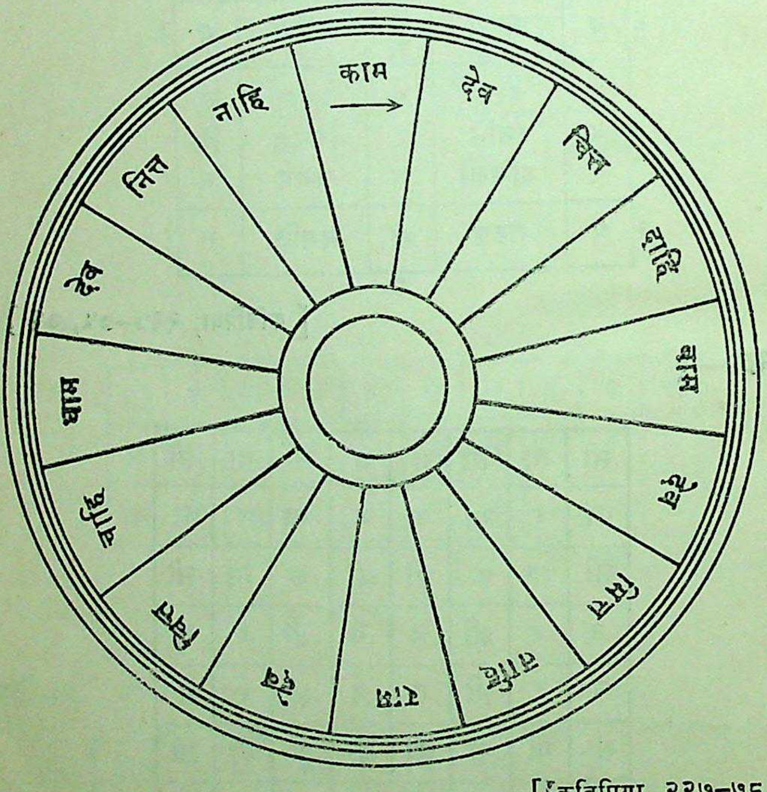

[कविप्रिया, २२७–७८]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चक्रबंध–

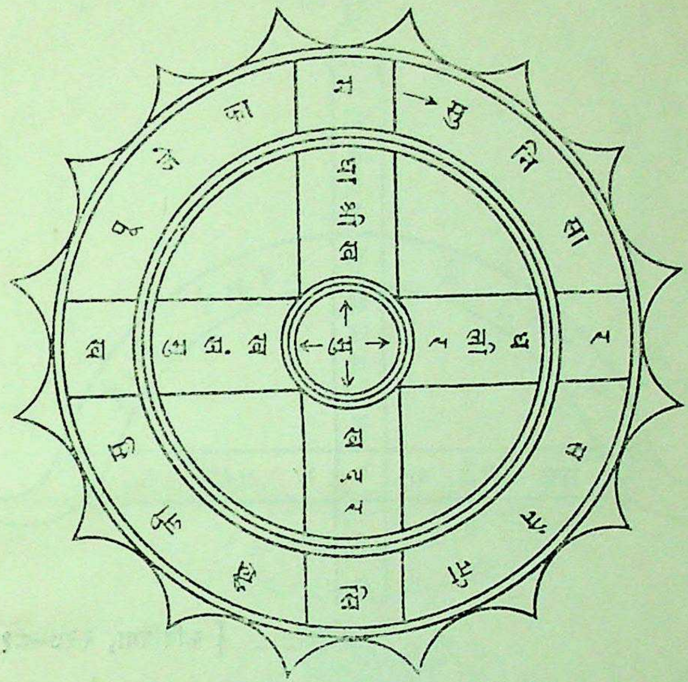

[कविप्रिया, २२७–७६]

कमलबंध–

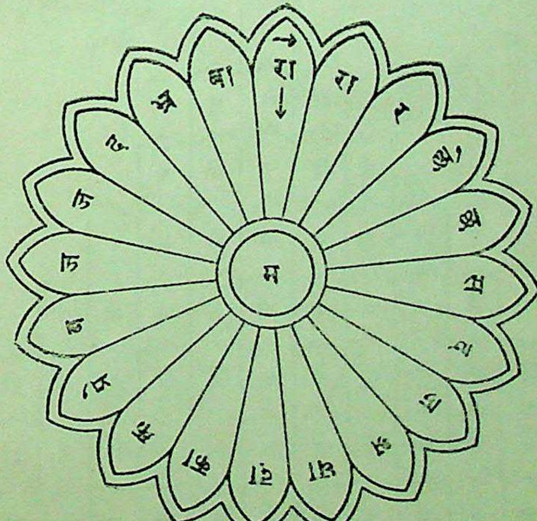

[कविप्रिया, २२७–८०]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धनुषबंध–

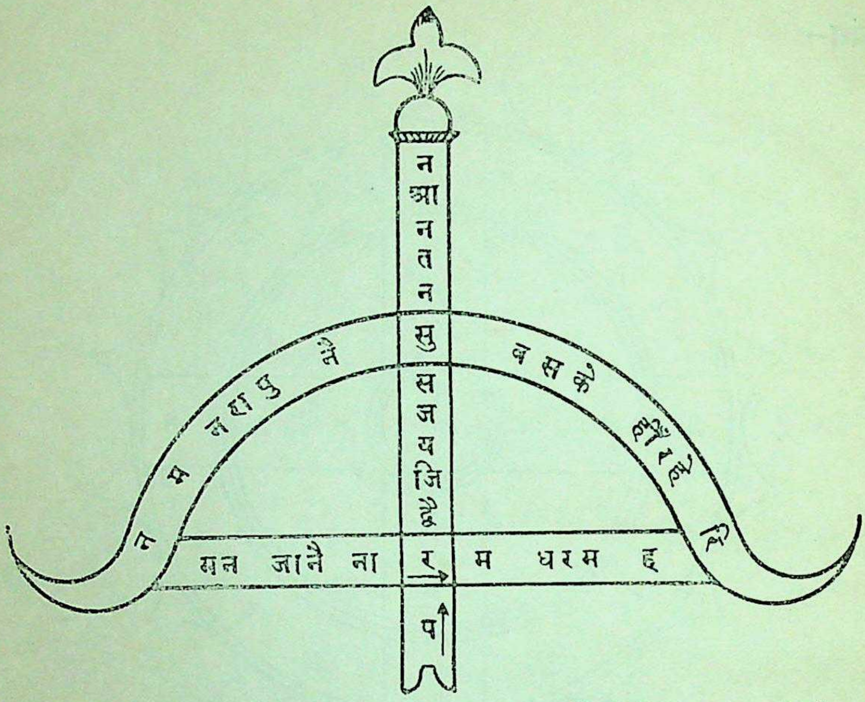

[कविप्रिया, २२७–८१]

पर्वतबंध–

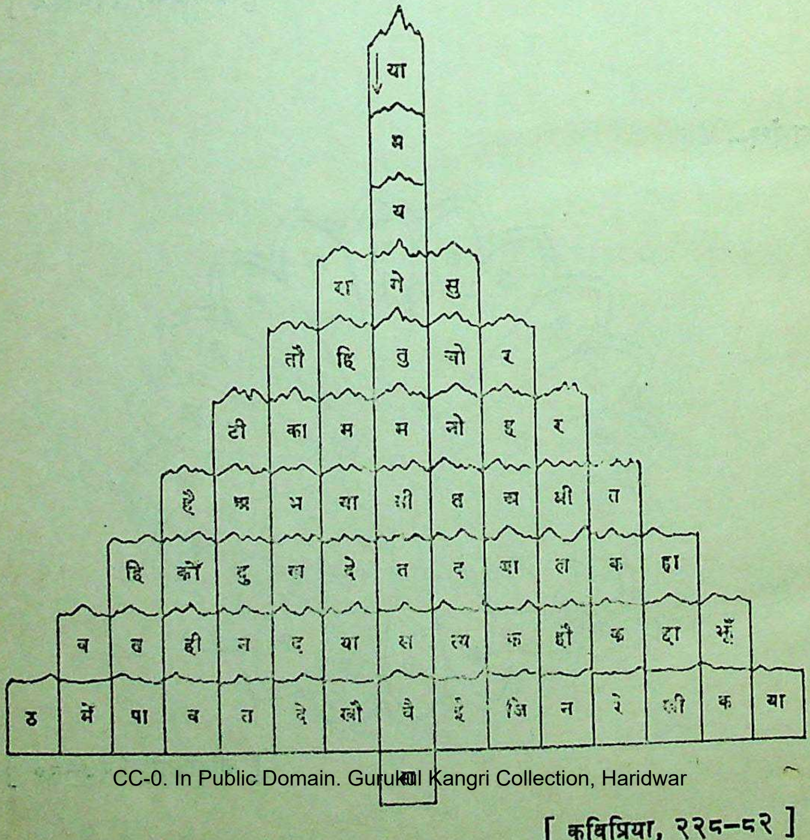

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

[कविप्रिया, २२८–८२]

सर्वतोमुख—२

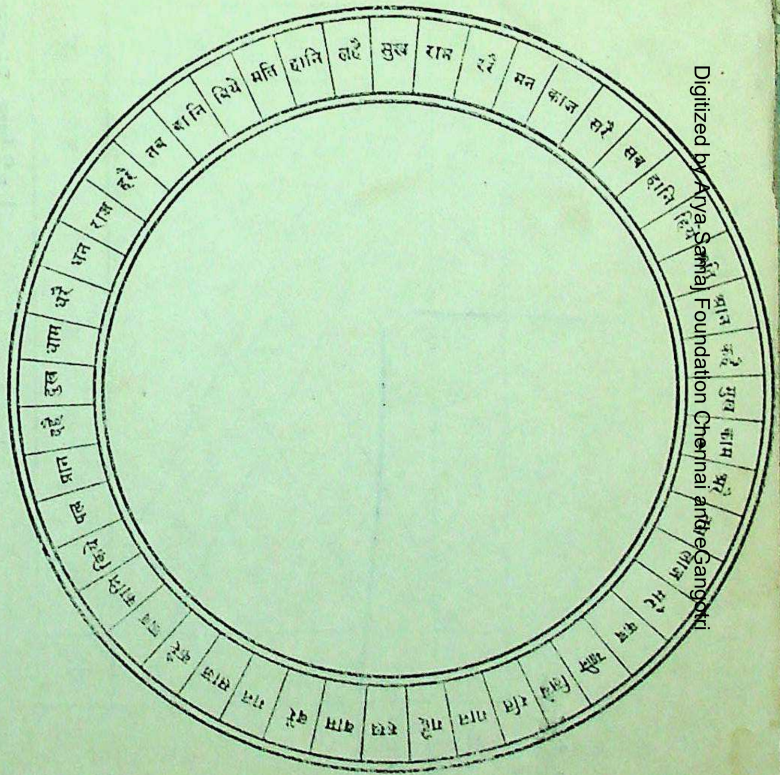

[कविप्रिया, २२८—८३]

हारबंध—

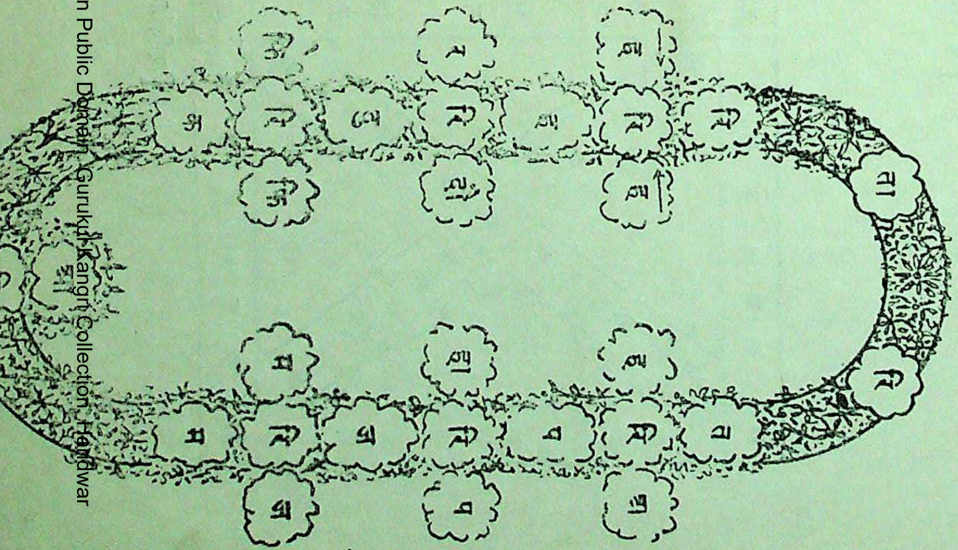

कविप्रिया, २२८—८४]

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

73590
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Gu...
Acces on
Class on
Cat. on
Tag etc
Checked
Any Other

चौकीबंध–

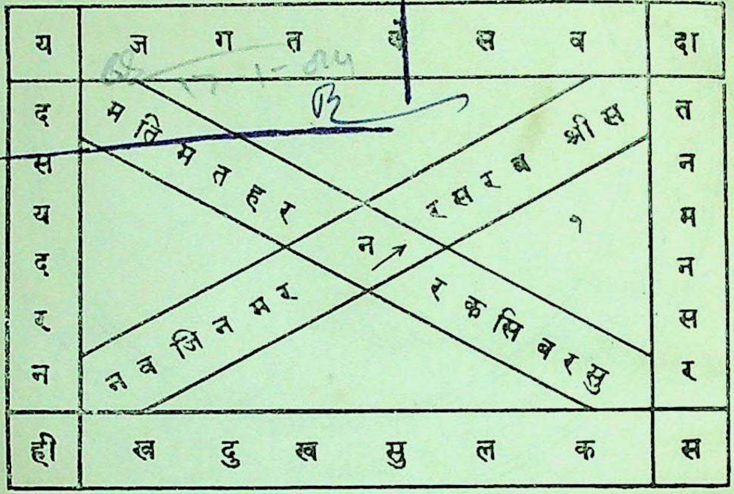

[कविप्रिया, २२८–८५]

डमरुबंध–

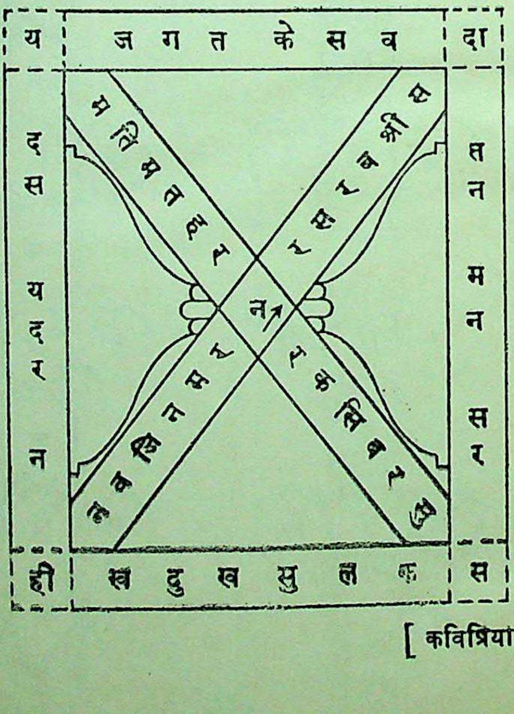

[कविप्रिया, २२८–८५]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar